आनन्दीबाई

[श्रीयुत सखाराम गणेश देउस्कर प्रणीत]

काशीनिवासी—

गंगाप्रसादगुप्त—अनुवादित ।

-: और :-

बाबू नन्दलाल वर्म्मा

मैनेजर फ्रेण्ड एण्ड कम्पनी, मथुरा द्वारा प्रकाशित ।

काशी ।

लहरी प्रेसमें प्रथम बार मुद्रित ।

अक्तूबर १९०४ ई.

बार १०००]

[मूल्य ।=) आ.

भूमिका।

कुछ दिन हुए, श्रीमती आनन्दीबाई जोशीका जीवनचरित मराठीभाषामें हमने पढ़ा था। उसके अनन्तर, उर्दू, बँगला, गुजराती और अंगरेजी भाषामें छपे हुए, उनके कई जीवनचरित हमारे देखनेमें आये। उन सबको देखकर, हमने उनका एक पृथक् 'जीवनचरित' हिन्दीमें स्वयं लिखनेका विचार किया; परन्तु अन्तमें श्रीयुक्त सखाराम गणेश देउसकरकी लिखी पुस्तक का हमने अनुवाद किया; क्योंकि हमने सोचा, कि यदि हम स्वयं लिखनेका उद्योग करेंगे, तो उनसे अच्छा कदापि न लिख सकेंगे।

हिन्दीमें ऐसी गुणवती रमणीके जीवनचरितका अभाव था। उस अभावकी पूर्त्तिके लिये हमारे माननीय मित्र पण्डित गणपति जानकीराम दुबे बी०ए० ने, श्रीमती आनन्दीबाईका सचित्र जीवनचरित, "छत्तीसगढ़मित्र" में किसी समय लिखा था। परन्तु वह बहुतही संक्षिप्त था, और उसके पुस्तकाकार न होनेके कारण, सब लोग उसे पढ़ भी नहीं सकते थे इसीसे हमने इस पुस्तकको लिख डाला।

काशी। अक्तूबर, १९०४ ई०

गं० प्र० गुप्त,
वर्त्तमान सम्पादक "भारतजीवन"।

॥ श्रीः ॥

आनन्दीबाई

पहिला परिच्छेद ।

श्रीमती आनन्दीबाई जोशीका जन्म, सन् १८६५ ईसवी के मार्च महीनेकी ३१ वीं तारीखको, पूना नगरीमें, उनके मामाके घरमें हुआ था। उनके पिता, गणपतिराव अमृतेश्वर जोशी, धनहीन नहीं थे। बम्बईके निकट, कल्याण नामक स्थानमें, उनके बापदादोंके समयकी, उनकी कुछ जमींदारी थी। वे धर्म्मनिष्ठ, सत्यप्रिय, और सीधेसादे मनुष्य थे। पहली स्त्रीकी मृत्युके अनन्तर, जिसके गर्भसे दामूराव नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ था, गणपतिरावने दूसरी बार पुनः अपना विवाह किया। उनकी दूसरी पत्नीके गर्भसे एक पुत्र और तीन कन्याएं उत्पन्न हुईं। उन तीन कन्याओं मेंसे 'आनन्दी' दूसरी थीं। उनके पिता माता, बाल्यावस्थामें, यमुनाबाईके नामसे उनको पुकारा करते थे। विवाहके पश्चात्, महाराष्ट्रीय रीतिके अनुसार, उनका नाम बदला गया। तबसे 'आनन्दीबाई' के नामसे वे प्रसिद्ध हुईं।

तीन मासकी हो जानेके पश्चात्, यमुना, माताके सहित अपने पिताके घर आयी। उस समय उस बालिकाके गोरे रंग, गुलाबी गालों, काले केशों, और मोहिनी मूर्त्तिको देखकर,

सभी कोई मुग्ध हो जाता था। खेलमें उसकी बराबरी करने वाला कोई नहीं था। जब वह पांच वर्षकी हुई, तब उसे बसन्त रोग हुआ, जिसमें उसको बहुत कष्ट भोगना पड़ा।

छः सात बर्षकी उमरमें, एकबार, यमुनाने अपने घरके साम्हने एक पादरीको वक्तृता करते सुना था। तबसे अपनी सहेलियोंको एकत्र करके, उनके साम्हने, वह प्रायः पादरी साहबके ढङ्गपर वक्तृता किया करती थी। यद्यपि उसकी वक्तृताका विषय कुछ भी नहीं रहता था, तथापि, उसका हाव भाव और जोश देखकर, देखनेवाले विस्मित होते थे। यदि उसकी माता 'पादरिन' कहकर उसका तिरस्कार करतीं, तो वह कुछ दिनके लिये वक्तृता करना बन्द कर देती।

बचपनमें, प्रायः लड़कियां खिलौने खेलनेमें विशेष अनुराग प्रकाश करती हैं, किन्तु यमुना खिलौने खेलना पसन्द नहीं करती थी। जिन खेलोंमें उछलने, कूदने, अथवा दौड़नेका विशेष काम पड़ता था, वेही खेल उसे अधिकतर रुचिकर थे। इसके सिवाय, ठाकुरजी की पूजा करने, खेल का घर तैय्यार करने, और फुलवारी बनानेमें भी उसका मन बहुत लगता था। वह प्रति दिन अपनी बनायी हुई फुलवारीमें जाकर, तरकारी और फूलवाले पेड़ोंकी सफाई अपने हाथोंसे किया करती थी। प्रायः नित्यही उसके लगाये हुए पौदोंको गाय और उसके बच्चे खा जाया करते थे। परन्तु यमुना, पुनः पुनः उनको लगा आकर, अपनी परिश्रम-शक्तिका परिचय दिया करती थी।

यमुनाकी माताका स्वभाव बहुतही कटु था। जब कभी वे क्रुद्ध होती थीं, तो गणपतिरावको भी उनसे डरना पड़ता था। बेचारी यमुना तो प्रायः नित्यही उनके हाथकी मार खाया करती थी। पासमें पड़ा हुआ पत्थरका टुकड़ा, अधजली लकड़ी, अथवा जो कोई वस्तु उनको मिलती, उसीसे वे यमुनाको मार दिया करतीं। एक दिन, पाठशालामें जानेका बहाना करके, यमुना किसी सहेलीके घरमें खेल रही थी। इस अपराधमें, उसकी मां, लातों से मारती और घसीटती हुई, उसे अपने घर लिवा लायी थीं। मार खाकर कभी कभी वह बिल्कुल ज्ञानशून्य हो जाती थी, किन्तु फिर भी उपद्रव करना नहीं छोड़ती थी। इस कारण, उसकी सहेलियां भी, उसे बुरा भला कहनेसे चूकती नहीं थीं। परन्तु यमुना चुपचाप सब बातें सह लेती थी। वह केवल अपने पिता और अपनी दादीकी बड़ी प्यारी लड़की थी।

सात वर्षकी उमरमें, यमुना, पहलेपहल पाठशालामें पढ़नेके लिये भेजी गयी। उसकी स्मरण-शक्ति बड़ी तीव्र थी। किसी बातको एकबार सुनकर, वह कभी उसको भूलती नहीं थी। परन्तु उस समय उसका मन पढ़ने लिखनेमें नहीं लगता था। उसके पिताने शिक्षकके शासनमें रखनेही के लिये उसको पाठशालामें भर्ती करा दिया था; परन्तु बिना जोर जबरदस्ती किये, यमुना, पाठशालामें नहीं जाती थी। जिस दिन यमुनाको पाठशालामें जाना पड़ता, उस दिन उसको पचास बहाने सूझते। कभी तो वह पेटमें दर्द होनेका बहाना करती, कभी शिरमें पीड़ा होनेकी बात

कहती, और कभी कुछ दूसराही ढंग फैलाकर अपना छुटकारा करती। और जब यदि उसकी दादी उसे घरमें रख लेतीं, तो उसका सब दुःख मिट जाता, और वह समस्त दिन उत्पात मचाती! यही कारण था, कि उसके पिता और उसकी दादीको छोड़कर, घरमें कोई भी उसका आदर नहीं करता था। परन्तु गणपतिराव कहते,—"हमारी यमुना बड़ी बुद्धिमती होगी। ज्यों ज्यों वह बड़ी होती जायगी, त्यों ही त्यों उसमें अच्छे अच्छे गुण भी दिखाई देते जायंगे।" वे प्रायः अपने भाईबन्दोंके साम्हने उसे लाकर, उससे परीक्षा दिलवाते, और उसकी प्रशंसा करते। परन्तु उनके बन्धुगणोंको यह बात अच्छी नहीं लगती। वे कहते, कि लड़कियोंको इस प्रकार पुरुषोंके साम्हने बुलाकर, उनसे पढ़ने लिखनेके विषयमें बातें करना उचित नहीं है; क्योंकि इससे वे ढीठ हो जाती हैं।

यमुना, अपनी मांकी तरह मोटी ताजी और बलिष्ठा थी। एकदिन उसके मौसाने, अपने पुत्रके साथ कुश्ती लड़नेको उससे कहा। उनका पुत्र, यमुनाको अपेक्षा उमरमें अधिक होने पर भी, उसके समान बलिष्ठ नहीं था। यमुनाने कुश्तीमें उसको तुरन्त हरा दिया। तबसे, यमुनाकी मासी, "यमुना मल्ल" के नामसे उसको पुकारने लगीं। एक तो यमुना स्वभावतः बलवती थी, दूसरे उसकी दादी उसके खाने पीने और स्वास्थ्य पर सदा दृष्टि रखतीं थीं। इसी कारण, सातही वर्षकी अवस्थामें, यमुना दस वर्षकी मालूम पड़ती थी। यह देखकर, यमुनाका विवाह कर

देनेके लिये, लोग उसके पिताको उभारने लगे। गणपतिरावने 'बर' खोजना आरम्भ किया। परन्तु उसके लिये बहुत दिनोंतक उनको भटकना पड़ा।

बहुत खोज करनेपर भी यमुनाके योग्य कोई बर नहीं मिला, और ज्यों ज्यों दिन बीतने लगे, त्योंही त्यों उसके पिता माताकी चिन्ता बढ़ने लगी। कदाचित् ईश्वर की कृपासे कोई अच्छा फल मिले, यह सोचकर, यमुनाकी माताने उसको आज्ञा दी, कि वह प्रतिदिन शिव-मन्दिरमें जाकर फेरी दे आया करे। आश्चर्य्यका विषय है, कि जिस दिन प्रथमबार शिव-मन्दिरमें जाकर उसने फेरी दी, उसी दिन सायंकालमें, गणपतिरावके एक सम्बन्धीने यमुनाकी मांके पास आकर, बरके मिल जानेकी बात कही। उन्होंने कहा—"यहांके डाकघरमें बर आया है। यदि इच्छा हो तो हमारे साथ चलकर देख लो।" यह बात सुनकर, बड़े आनन्दके साथ, यमुनाकी दादी, मांसी, और बहिन, उस आदमीको साथमें लेकर, बर देखनेके निमित्त कल्याणके डाकघरमें गयीं, और पीछेकी ओरके द्वारसे सबने पोष्टमाष्टरकी कोठरीमें प्रवेश किया। सबको बर पसन्द आया। दूसरे दिन, एक पड़ोसीके घरमें पोष्टमाष्टर साहबको बुलाकर, कन्या उनको दिखला दी गयी। उन्होंने उसके विषयमें कुछ विशेष बातें नहीं पूछीं, वरन्, कन्याको देखकर, उसके साथ विवाह करना उन्होंने स्वीकार कर लिया। उसी समय विवाहका दिन भी स्थिर हो गया। इतनी बात हो जानेसे मानो गणपतिरावके शिरसे एक भारी बोझ टल गया।

जिनके साथ यमुनाका विवाह होना स्थिर हुआ था, उनका नाम श्रीयुक्त गोपाल विनायक जोशी संगमनेरकर है। महाराष्ट्रोंमें जो लोग ज्योतिषीका काम करते हैं, उन्हींको 'जोशी' कहते हैं। अच्छे कुलका कोई भी महाराष्ट्रीय ब्राह्मण, यह काम कर सकता है। गोपालराव और उनके भावी श्वसुर गणपतिराव, दोनोंही अपने पुरुखाओंके समयसे जोशी थे। बम्बईसे ९० मीलके अन्तर पर, ईशान-कोनमें‡ "संगमनेर" नामक स्थानमें गोपालरावका जन्म हुआ था, इसीसे लोग उनको 'संगमनेरकर' कहते थे। गोपालराव विचित्र आदमी थे। उनकी तरह चंचल चित्तके मनुष्य बहुत कम दिखाई देते हैं। वे पहले ब्रह्मसमाजी थे, परन्तु आनन्दीबाईकी मृत्युके अनन्तर वे खृष्टान हो गये, और अन्त में प्रायश्चित्त करके उन्होंने हिन्दू समाजमें फिर प्रवेश किया। खृष्टान जानेपरभी उन्होंने यज्ञोपवीत नहीं उतारा था। गांवकी पाठशालामें मराठी लिखना पढ़ना सीखनेके उपरान्त, जिस समय अंगरेजी पढ़नेके लिये वे नासिक गये, उसी समय उनको एक छः वर्षकी बलिकाके साथ विवाह करना पड़ा। परन्तु जब विवाहिता बालिका उनके घरमें आकर हिन्दुस्थानी रीतिके अनुसार घरके कामकाज करने लगीं, तो गोपालराव बहुत असन्तुष्ट हुए। जब जब उनकी माँ अपनी पतोहूको घरके कामकाज करनेकी आज्ञा देती, तब तब गोपालरावसे उनसे झगड़ा होता। वे कहते, कि जबतक बहू युवती न हो जाय, तबतक उसके हाथसे घरके काम कराना

‡ पूर्व और उत्तरके बीचके कोनको 'ईशान-कोन" कहते है।

अनुचित बात है। वे स्त्री-शिक्षाके पक्षपाती थे, और अपनी स्त्रीको कुछ थोड़ा बहुत पढ़ना लिखना भी उन्होंने सिखाया था। परन्तु दुर्भाग्य से, थोड़ीही उमरमें उनकी पहली पत्नीकी मृत्यु होगयी। इससे गोपालरावके हृदयमें बहुत चोट पहुंची, और उस समय उन्होंने पक्का विचार कर लिया, कि अब वे फिर कभी विवाह न करेंगे। परन्तु जिस तरह अनेक लोगोंको अपने पुराने विचार बदलने पड़े हैं, उसी भांति गोपालरावको भी अपनी प्रतिज्ञा तोड़कर दूसरी बार विवाह करनाही पड़ा।

गोपालरावको, थोड़ेही दिनोंमें पढ़ना लिखना छोड़कर, डाक विभागमें काम करनेके लिये लाचार होना पड़ा था। पहली जगहसे बदलकर जब वे कल्याणके डाकखानेमें आये, तो यमुनाके साथ उनका विवाह होना स्थिर हुआ। विवाह होनेसे पहले, उन्होंने यमुनाके पिता गणपतिरावसे एक बातकी प्रतिज्ञा करा ली थी। वह बात यह थी, कि विवाह हो जानेके पश्चात्, अपनी पत्नी यमुनाको उसीके पिताके घरमें रखकर, वे उसके पढ़ाने लिखानेका अपनी इच्छाके अनुसार प्रबन्ध करेंगे;—इस काममें कोई बाधा न दे। यद्यपि गणपतिराव स्त्री-शिक्षाके विशेष पक्षपाती नहीं थे, तोभी, यह सोचकर कि यमुनाके लिये दूसरे वरके खोजनेमें बहुत समय नष्ट होगा, उन्होंने अपने दामादकी बात स्वीकार की। तब विवाहकी तय्यारी करनेके लिये छुट्टी लेकर, गणपतिराव, "संगमनेर" की ओर प्रस्थानित हुए।

गोपालरावके चंचल चित्तकी जो बात हम ऊपर कह आये हैं, उसका इसी समय पहलेपहल विकाश हुआ। उन्होंने निश्चय किया था, कि यदि दूसरी बार विवाह करनेकी उनको आवश्यकता होगी, तो वे किसी विधवाके साथ अपना विवाह करेंगे। यमुनाके साथ विवाह-सम्बन्ध स्थिर होनेसे पहले, उन्होंने, महाराष्ट्र देशमें विधवा-विवाहके फैलानेवाले पंडितवर विष्णु परशुराम शास्त्री तथा कई दूसरे समाज-संस्कारक लोगोंसे इस विषयमें पत्र-व्यवहार किया था। यहांतक, कि गणपतिरावकी कन्याके साथ विवाह होना स्थिर हो जाने पर भी, उन्हों ने अपने लिये एक विधवा कन्याका खोजना बन्द नहीं किया। गोपालरावकी इच्छा विधवा-विवाहकी ओर देखकर, उनके पिता बहुत दुःखित हुए। अपने पिताको सन्तुष्ट करनेके लिये, गोपालरावने घर जाकर, यमुनाके साथ अपना विवाहसम्बन्ध स्थिर होनेकी बात सबसे कह दी। अपने पुत्रके मुंहसे यह बात सुनकर, उनके पिता माता दोनों आनन्दित हुए, और इस शुभकार्य्यके लिये वे बहुत जल्दी करने लगे। परन्तु गोपालरावने टालमटोल करके बहुत विलम्ब कर दिया; और अपने विवाहके लिये एक विधवा कन्याकी खोज करनेके निमित्त, उन्होंने अपने संस्कारक मित्रोंको पत्र लिखा।

इधर गणपतिराव, गोपालरावकी बातपर विश्वास करके, कन्याके विवाहकी तय्यारी करने लगे। मित्र और सम्बन्धी निमन्त्रित किये गये। घरमें गाना बजाना आदि

विवाहके उत्सव होने लगे। किन्तु वरका कोई समाचार नहीं मिला! ज्यों ज्यों दिन बीतने लगे, त्योंही त्यों कन्याकी ओरके लोगोंकी घबराहट बढ़ने लगी। यहांतक, कि जिस दिन विवाह होना स्थिर हुआ था, वह दिन भी बीत गया। गांवके निवासियों और अड़ोस पड़ोसके लोगोंमेंसे, कोई तो वरके चरित्रकी, कोई यमुनाके भाग्यकी, और कोई उस आदमीकी जो विवाह करानेमें अगुआ बना था, निन्दा करने लगा। यमुनाके पिता माताको इस घटनाका बहुतही शोक हुआ।

गोपालरावके शिरपरसे विधवा-विवाहका भूत अबतक नहीं उतरा था। इसी कारण, अपने पिता माता और गणपतिरावको धोखा देकर, वे 'संगमनेर' से किसी दूसरी जगह चले गये थे। कुछ दिनोंके बाद, जब विवाहका दिन टल गया, तब गोपालराव फिर कल्याणके डाकखानेमें जानेकी तय्यारी करने लगे। इसी समय, उस आदमीसे, जो यमुनाके साथ उनका विवाह करानेमें अगुआ बना था, नासिकके ष्टेशनपर सहसा उनका साम्हना होगया। वे बेचारे नामहँसाईके डरसे, गोपालरावको पकड़नेके लिये, संगमनेरकी ओर जा रहे थे।

रास्तेमें, नासिकके ष्टेशनपर गोपालरावको देखतेही, उन्होंने बहुतेरी भली बुरी बातें उनको सुना डालीं। गोपालराव बहुत लज्जित होकर बारंबार उनसे क्षमा मांगने लगे। जो महाशय अगुआ बने थे, वे, नासिक-निवासी श्रीयुक्त गङ्गाधर नरसिंह केनकर नामक एक धनवान्

व्यक्तिके पास उनको ले गये। अन्तमें, केतकर महाशयके बहुत समझाने बुझानेपर, गोपालराव, नासिकमें रहनेवाले अपने कुछ सम्बन्धियोंके साथ, विवाह करनेके निमित्त 'कल्याण' जानेपर लाचार हुए।

यथासमय विवाह-कार्य्य समाप्त हुआ। इसी समय यमुनाका पहला नाम बदलकर नया नाम रखा गया। विवाहके समय गोपालरावने, अपनी नयी दुलहिनका नाम "आनन्दीबाई" रखा। उस समयसे, यमुना, इसी नामसे पुकारी जाने लगी।

इसके अनन्तर, गणपतिरावके अनुरोधसे, गोपालराव श्वशुरहीके घरमें रहने लगे। अपने पहले किये हुए सङ्कल्पके अनुसार, उन्होंने आनन्दीबाईके पढ़नेके लिये कई मराठी पुस्तकें ला दीं। परन्तु पहलेकी तरह अबभी लिखने पढ़नेमें आनन्दीका मन नहीं लगता था। अतएव, वे पुस्तकें प्रायः जहांकी तहां पड़ी रहती थीं। गणपतिराव स्त्रीशिक्षाके विशेष पक्षपाती नहीं थे। उन्होंने अपने मित्रोंके द्वारा गोपालरावको इस बातसे सूचित किया; किन्तु गोपालराव किसीकी बात सुननेवाले नहीं थे। जो लोग गोपालरावको स्त्री-शिक्षाके विरुद्ध समझाने गये थे, उन लोगोंको उन्होंने जैसा उत्तर दिया था, वैसा उत्तर कोई भी समझदार आदमी किसीको नहीं दे सकता। इसीसे कहते हैं, कि वे अद्भुत मनुष्य थे। अनेक बातोंमें उनकी अद्भुत प्रकृतिका परिचय मिलता था। विवाह होनेके बाद दोही सप्ताहके बीचमें एक छोटीसी बातपर क्रुद्ध

होकर, उन्हेंाने एक लकड़ीके टुकड़ेसे अपनी नयी दुलहिनको इस जोरसे मारा था, कि उस बेचारीको कई दिनों तक चारपाईपर पड़ा रहना पड़ा था! जो महाशय स्त्री-शिक्षाके बड़े पक्षपाती थे, और जिनको नयी दुलहिनके हाथसे घरका काम कराना अनुचित जान पड़ता था, उनका ऐसा निष्ठुर होना, सचमुचहीं बड़े आश्चर्य की बात है!

विवाहके पश्चात्, आठ महीनेतक, गोपालराव अपने श्वशुरके मकानमें रहे थे। इस बातके कहनेकी कोई आवश्यकता नहीं है, कि आनन्दीबाई उनसे बहुत डरती थीं और जहांतक उनसे बनता था वे लिखने पढ़नेसे जी चुराती थीं। यह सोचकर, कि यहां रहनेसे स्त्रीकी शिक्षा न हो सकेगी, गोपालरावने लिखा पढ़ी करके अलीबागमें अपनी बदली करा ली। आनन्दबाईकी रक्षाके लिये, उनकी दादी भी अपने दामादके साथ अलीबागको चली गयीं।

वहां जाकर भी आनन्दीबाईने पढ़ने लिखनेमें जी नहीं लगाया। वे गोपालरावके साम्हनेही पुस्तकादिको इधर उधर फेंक देती थीं! स्त्रीकी यह दशा देखकर, गोपालरावने एक दूसरी चाल पकड़ी। आजसे आनन्दीपर क्रोध दिखाना उन्होंने बन्द किया; बरन्, उनके लिये बहुत सी जी बहलानेकी सामग्री लाकर, उन्होंने कहा,—"यदि तू पढ़ने लिखनेमें मन लगावेगी, तो तेरे लिये और भी बहुतेरी चीजें ला दूंगा।" इस तरह लालच दिखानेका फल अच्छा हुआ। आनन्दीबाई लिखने पढ़नेमें थोड़ा थोड़ा जी लगाने लगीं; तौभी, पढ़नेके समय उनकी दशा ठीक

वैसीही होती थी, जैसीकि पिंजड़ेमें बन्द किये हुए किसी नये पक्षीकी होती होगी। थोड़ी देरके लिये भी एक स्थानमें स्थिर होकर उनने बैठा नहीं जाता था। पढ़ना समाप्त होतेही, वे कूदकर अपनी संगिनियोंके पास जा पहुंचतीं थीं। किन्तु उनकी बुद्धि बड़ी तीक्ष्ण थी; और, दो चार बारमेंही, सब बातें अच्छी तरह उनकी समझमें आ जाती थीं।

अच्छे अच्छे कपड़ों और गहनोंका पहनना, आनन्दीबाई बहुत पसन्द करती थीं। किन्तु गोपालरावका विचार बिल्कुल इसका उलटा था। वे आडम्बर और विलासप्रियताके बड़े विरोधी थे। आनन्दीबाईका 'बनाव-सिङ्गार' उनको जरा भी अच्छा नहीं लगता था; और समय समयपर इसके लिये वे उनको उलटी सीधीभी सुनाया करते थे। अन्तमें, आनन्दीबाईने, अपना पहला अभ्यास त्याग कर, स्वामीकी बात मान ली। इधर अलीबागमें आकर, एकही वर्षके बीच में, उन्होंने भूगोल, व्याकरण, मराठी इतिहास, और गणितका पहला अंशभी पढ़कर समाप्त कर डाला। उनके हाथकी लिखावट भी अच्छी होने लगी॥

दूसरा परिच्छेद ।

विवाहके पश्चात्, दोही वर्षके बीचमें, आनन्दीबाई गर्भवती हुईं। यथासमय उनको एक पुत्र हुआ। किन्तु दश दिनसे अधिक कालतक, वह बच्चा इस लोकमें न रह सका। जिस बड़े कामके करनेके लिये आनन्दीबाई इस जगत्में आयी थीं, जान पड़ता है कि उस कामका रास्ता साफ करनेहीके लिये भगवान्ने बेचारे बच्चेको उनकी गोद से उठा लिया।

आनन्दीबाईकी शिक्षाके लिये, उनके स्वामी गोपालराव, कल्याण छोड़कर अलीबाग आये थे। यहां आकर, एक वर्षमें, आनन्दीबाईकी मराठी-शिक्षा समाप्त हुई। इसके बाद, बच्चा जननेके समय वे कई महीनेतक अपने पिताके घरमें जाकर रही थीं। पुत्रके शोकमें आनन्दीबाई ने एक मासके लिये सबसे बोलना चालना छोड़ दिया था। इसके अनन्तर, पुनः उन्होंने लिखने पढ़नेकी ओर ध्यान दिया। इसी समय गोपालरावने उनको अङ्गरेजी पढ़ाना आरम्भ किया। आनन्दीबाईकी रुचि विद्या-शिक्षाकी ओर बढ़ने लगी। वे बड़ी बुद्धिमती थीं; इससे थोड़ीही देरमें अपना नियमित पाठ समाप्त करके, अनेक साप्ताहिक और मासिकपत्रोंके पढ़नेमें समय बिताती थीं। गृह-सम्बन्धी पत्रादिके लिखनेका भार भी गोपालरावने उन्हींको सौंपा था; इस कारण उनके हाथके लिखे अक्षर भी सुन्दर हुए। परन्तु, आनन्दीबाईको ठीक अपनी इच्छाके

अनुसार शिक्षा देनेका मौका न देखकर, गोपालरावको थोड़ेही दिनोंमें अलीबाग छोड़ना पड़ा।

अपनी पत्नीको अंगरेजीकी शिक्षा देनेके साथ साथ, गोपालराव, उनको अपने साथमें लेकर, प्रायः समुद्रके किनारे हवाखाने जाया करते थे। इससे अनेक लोगोंकी दृष्टि उनपर पड़ने लगी। महाराष्ट्र समाजमें पर्देका रिवाज न होनेपर भी, इस प्रकार युवती पत्नीको साथमें लेकर समुद्रके किनारे घूमना लोग बुरी बात समझते हैं। इस कारण, बहुत लोग, गोपालरावके विषयमें तरह तरहकी बातें कहने लगे। अन्तमें, दुःखित होकर, उन्होंने कोल्हापुरमें अपनी बदली करा ली। उस समय आनन्दीबाईकी उमर तेरह वर्षकी थी।

कोल्हापुर देशी राज्य है। वहांके राजपुरुष लोग स्त्री-शिक्षाके पक्षपाती थे। कोल्हापुर-नरेशकी ओरसे वहां एक स्त्री-विद्यालय खोला गया था। कुमारी माइसी नाम्नी एक गोरी बीबी, उस विद्यालयमें पढ़ाती थीं। इन्हीं बातोंको सुनकर, गोपालराव कोल्हापुर गये थे! किन्तु अपनी स्त्रीको अंगरेजी ढङ्गसे शिक्षा देनेकी उनको इच्छा थी, इस कारण, अनेक मनुष्य उनकी हँसी उड़ाने लगे। वे वहांके मिशनरियोंके घरपर प्रायः अपनी स्त्रीके साथ जाते थे, और आनन्दीबाईको कुमारी माइसीके साथ एक गाड़ीमें बैठाकर, प्रतिदिन राजकीय स्त्री-विद्यालयमें भेजते थे। इस कारण, वहांके देशीय रीति नीतिके पक्षपाती लोग, उनसे बहुत चिढ़ गये। इसका फल यह हुआ, कि उन्हें

नन्दीबाईको स्त्री-विद्यालयमें भेजना कम करना पड़ा। फिर भी, दृढ़प्रतिज्ञ गोपलरावने, अपना इरादा कच्चा नहीं होने दिया।

मिशनरियोंसे बातचीत करनेसे गोपालरावको मालूम हुआ, कि यदि आनन्दीबाई अमेरिका भेजी जायं, तो वहां उनको अपनी इच्छाके अनुसार शिक्षा पानेका बहुत सुभीता होगा। मिशनरियोंने इस काममें उनकी सहायता करने की भी प्रतिज्ञाकी, वरन् वहांके कुछ लोगोंको पत्र लिखकर गोपालरावका परिचय उनसे करा दिया। उस समय गोपालराव और मिशनरियोंके पास एक दूसरेके जो पत्र आये और गये थे, उन पत्रोंके पढ़नेसे विदित होता है, कि गोपालरावने कहीं अमेरिकामें अपनी नौकरी लगवा देनेकी प्रार्थना उनसे की थी। परन्तु मिशनरी महोदयोंने इस विषय में उनकी कोई सहायता नहीं की। वे लोग कौशलसे गोपालरावको खृष्टान बनानेकी चेष्टा कर रहे थे। जब गोपालरावको उनकी चालाकी मालूम हुई, तब उन्होंने उनसे चिढ़कर उनका साथ छोड़ दिया। इससे पहलेही, आनन्दीबाईको खृष्टान करनेके लिये, मिशनरियोंने कई बार उनको खृष्ट धर्मका माहात्म्य सुनाया था। किन्तु तेरह वर्षकी आनन्दीबाईको अपने धर्मपर इतना विश्वास था, कि उन्होंने उनकी किसी बातपर ध्यान नहीं दिया।

कोल्हापुरमें आनन्दीबाईकी शिक्षाका सुभीता न होने के कारण, सन् १८७९ ईस्वीके प्रारम्भमें, गोपालराव वहां से बम्बई चले गये। वहां एक मिशनरी स्कूलमें आनन्दी-

बाईकी शिक्षा आरम्भ हुई। आनन्दीबाई प्रतिदिन अकेले ही पैदल विद्यालयको जाती थीं। इसके सिवाय, उनका पहनावा भी उस समय कुछ अंगरेजी ढङ्गका था। इस कारण, बम्बईके साधारण लोग, विशेषकर वणिक्, तम्बोली, और तरकारीवाले, रास्तेमें उनको देखकर हँसते थे।

उसी समय गोपालरावके पिता विनायकराव अपने पुत्रसे मिलनेके लिये बम्बई गये। वहां जा, और अपने पुत्र और पुत्रबधूके रंगढंग देखकर, वे बहुत दुःखित हुए। कारण, कि महाराष्ट्र देशमें बहुत दिनोंसे स्त्रीशिक्षाका प्रचार रहनेपर भी, आजकलकी तरह नहीं था। अट्ठारहवीं शताब्दीमें, पेशवाओंके समयमें, धनवान् लोग बूढ़े शिक्षकोंको घरमें बुलाकर अपने घरानेकी लाड़कियोंको यथोचित विद्याशिक्षा दिलवाते थे। उस समयके सरदारोंकी स्त्रियाँ राजनीति भी जानती थीं। उसी भाँति घरके बड़े लोगोंसे अनुमति लेकर, विश्वासी नौकर अथवा सम्बन्धीके साथ महाराष्ट्रीय ब्राह्मण-महिलाओंका घरके बाहर निकलना कभी बुरा नहीं समझा जाता था; न अब समझा जाता है। परन्तु पश्चिमी शिक्षाकी रौशनी पाये हुए महाराष्ट्र देशके युवकगण, साधारण स्कूलोंमें रमणियोंको अकेले भेजकर ही, निन्दाभाजन बन रहे हैं। गोपालरावसे भी उनके पिता इसी कारण असन्तुष्ट थे। जब उन्होंने गोपालरावको विदेशीय शिक्षाके विरुद्ध बहुत समझाया बुझाया; परन्तु उन्होंने अपने पिताकी एक बातपर भी ध्यान नहीं दिया; तब बेचारे झल्लाकर और यह कहकर बम्बईसे चले

गये, कि अब वे अपने पुत्रका मुख कभी नहीं देखेंगे!

मिशनरी स्कूलमें पढ़नेके समय आनन्दीबाई सदैव अपने दर्जेमें पहला स्थान पानेकी चेष्टा करती थीं। वहां उनको माष्टरिन तथा साथमें पढ़नेवाली स्त्रियोंके साथ अंगरेजीमें बातचीत करनी पड़ती थी; इस कारण, थोड़ेही दिनोंमें उन्होंने अंगरेजी भाषा भी अच्छी तरह सीख ली। गोपालरावने इस बातके लिये उद्योग करनेमें कोई त्रुटि नहीं की, जिसमें आनन्दीबाई अंगरेजी शिक्षाके साथ साथ अपनी चालचलन भी अंगरेजी लेडियोंकी तरह बना लें! अलीबागसे कोल्हापुर जाते समय रास्तेमें एकदिन आनन्दीबाईको बासेमें अकेली छोड़कर वे आठ पहरतक न मालूम कहां गायब थे! तेरह वर्षकी बालिका विदेशमें इस प्रकार संकटमें पड़कर कैसी घबरायी होगी, इस बातको पाठकगण स्वयं समझ सकते हैं। बम्बईमें रहनेके समय भी, गोपालरावने, अपनी स्त्रीका साहस बढ़ानेके लिये अनेक उद्योग किये थे। आनन्दीबाईको अकेले मिशनरी स्कूलमें पढ़नेके लिये वे इसी मतलबसे भेजते थे। बम्बईसे कल्याण नगर बहुत दूरपर नहीं है; इससे आनन्दीबाईको बीच बीचमें अपने पिताके घर जाने का भी अच्छा मैाका मिलता था। गोपालराव, उनको प्रायः अकेलेही कल्याण जानेकी आज्ञा दे देते थे! पहले तो उनकी आज्ञासे एक नैाकर ष्टेशनतक जाकर अनन्दीबाईको टिकट दिलाकर लैाट जाता था; परन्तु पीछे गोपालरावने यह बात भी रोक दी। उस समयसे आनन्दीबाईको, चाहे उनकी इच्छा हो या न हो,

अकेलेही कल्याण तक जाना पड़ता था।

इसके बाद, गोपालराव, आनन्दीबाईकी दादीको कल्याण भेजकर, और स्वयं तीन महीनेकी छुट्टी लेकर, उत्तरीय भारतकी सैर करनेके लिये बम्बईसे चले गये। चौदह वर्षकी आनन्दीको अकेले बम्बईमें रहना पड़ा। उस समय वे स्कूलके बोर्डिङ्ग-हाउसमें रहती थीं, और प्रतिदिन प्रातःकाल और सन्ध्याके समय, गोपालरावकी पहली स्त्रीके भाईके मकानपर जाकर, भोजन कर आती थीं, इस तरह आने जानेके समय, रास्तेमें चलनेवाले लोग उनको बहुत दिक करते थे। अन्तमें, दुष्टोंकी बदमाशीसे घबराकर, डेढ़ महीनेके बाद वे अपने पिताके घर चली गयीं।

उत्तरीय भारतसे लौटकर, गोपालरावने देखा, कि बारम्बार पिताके घरमें जानेके कारण, आनन्दीबाईकी शिक्षा ठीक तरहपर नहीं हो सकती। अतएव वे बहुत दूरके स्थानमें अपनी बदली करानेकी चेष्टा करने लगे। उसी समय कच्छभुज प्रान्तके भुज नामक स्थानके डाकखानेमें, पोष्टमाष्टरकी जगह खाली हुई। डाकके अफसरोंने उसी डाकखानेमें गोपालरावकी बदली की। किन्तु भुजमें जाकर आनन्दीबाईको स्कूलमें भेजनेका उन्होंने कोई सुभीता नहीं देखा। अतएव, वे घरहीपर छुट्टीके समय उनको पढ़ाने लगे।

भुज जाकर गोपालराव एक नयी आपदामें पड़ गये। वे अबतक आनन्दीबाईकी केवल पढ़ाईकी ओर दृष्टि रखते थे; इसलिये उन्होंने (अर्थात् आनन्दीबाईने) भोजनादि बनाना नहीं सीखा था। दादीकी कृपासे, घरके काम करने

की कभी उनको आवश्यकता नहीं हुई थी। भुजमें जाकर जब घरके कामकाजका बोझ उन्हींके ऊपर पड़ा, तो वे बहुत घबरा गयीं। वे भोजन-बनाना नहीं जानती थीं; इस कारण उनका मन उसमें नहीं लगता था। भुजमें दूसरी तरहकी खानेकी चीजका मिलना भी कठिन था; इसीसे, पहले कई दिनोंतक, गोपालराव और आनन्दीबाई को केवल भुना हुआ चना खाकर रहना पड़ा था!

डेढ़ वर्षतक भुजमें रहकर, आनन्दीबाईने, अंगरेजी भाषामें अच्छी योग्यता प्राप्त कर ली। अङ्गरेजीके सिवा, दो एक संस्कृत पुस्तकें भी उन्होंने समाप्त कर डालीं। किन्तु थोड़ेही दिनोंमें संस्कृत-ज्ञानमें वे अपने पतिसे भी बढ़ गयीं। पढ़ने लिखनेके अतिरिक्त, किसी मेमसे कपड़े सीना और कशीदा काढ़ना भी उन्होंने सीख लिया।

इधर गोपालराव और मिशनरियोंके बीचमें इनसे पहले जो पत्र-व्यवहार हुआ था, वह अमेरिकाके 'क्रिश्चियन रिविउ' नामक एक मासिकपत्रमें प्रकाशित हुआ। दैव-क्रमसे उक्त पत्र की वह संख्या, जिसमें गोपालराव और मिशनरियोंकी चीठियां छपी थीं, श्रीमती कारपेण्टर नाम्नी एक सदयहृदया रमणीके हाथ लगा। मिसेज़ कारपेण्टर अमेरिकाके रशेल नगरकी रहनेवाली थीं। एक दिन किसी दाँतकी दवा करनेवाले आदमीके मकानपर उन्होंने उक्त मासिकपत्रकी उक्त संख्या देखी थी। फिर जब उसको उन्होंने पढ़ा, तो उनको बहुत दुःख हुआ। उन सब पत्रों के पढ़नेसे, उन्हें, गोपालरावकी अवस्था और मिशनरियों

के बर्तावके विषयकी अनेक बातें मालूम हुईं; और उन्होंने निश्चय किया, कि वे आनन्दीबाईको एक पत्र लिखकर उन्हें इस बातका उत्साह दिलावेंगी, कि वे ऊंचे दर्जेकी शिक्षा लाभ करें।

दूसरे दिन, प्रातःकाल, श्रीमती कारपेण्टरकी "आमी" नाम्नी नौ वर्षकी लड़की, सोतेसे उठकर दौड़ी हुई उनके पास आयी, और बोली,—"माँ! मैंने स्वप्नमें देखा है, कि तुमने हिन्दुस्थानमें किसीके नाम पत्र लिखा है।" इस बालिकाने एशिया खण्डका नक्शा कभी नहीं देखा था, और श्रीमती कारपेण्टरने भी अपने मनकी बात उससे नहीं कही थी। अतएव, उन्होंने बालिकाके इस स्वप्नको दैव-संकेत समझा, और देर न करके, कोल्हापुरके पतेपर आनन्दीबाईको सहानुभूति और उत्साहसे भरा हुआ एक पत्र लिखा। उस पत्रमें उन्होंने यह भी लिखा, कि आनन्दीबाईकी ज्ञान-वृद्धिके लिये, और अमेरिकाके विषयमें उनको अनेक बातें बतलानेके लिये, अमेरिकाकी राजधानी न्यूयार्कसे निकलनेवाले एक साप्ताहिक अथवा मासिकपत्रको वे बराबर उनके पास भेजा करेंगी। यह बात लिखते समय, उन्होंने स्वयं एक स्थानपर लिखा था, कि—"यदि मेरी कन्या स्वप्न देखकर उसका वृत्तान्त मुझसे न कहती, तो, कदाचित् अनेक कामोंमें फँसकर, मैं आनन्दीबाईको पत्र लिखना भूल जाती!"

यह पत्र भुज नगरमें आनन्दीबाईको प्राप्त हुआ। अमेरिका जैसे स्थानमें इस तरहपर एक अकारण बन्धु

पाकर, उनको बड़ा आनन्द हुआ । इसपर, उन्होंने एक पत्र लिखकर, श्रीमती कारपेण्टरको सहायताका धन्यवाद किया । उसी समयसे बराबर हर महीने दोनोंमें पत्रव्यवहार होने लगा । उन पत्रोंमें दोनोंही अपने अपने देशके सामाजिक आचार व्यवहारकी बात एक दूसरेको लिखती थीं । स्वजाति और स्वदेशकी रीति नीतिपर आनन्दीबाई-की कैसी श्रद्धा थी, और वे किस तरह निडर होकर विदेशियोंपर अपना यह विचार प्रकट करती थीं, —इस बात का पता उनके उन पत्रोंके पढ़नेसे, जिन्हें उन्होंने श्रीमती कारपेण्टरके नाम लिखा था, साफ साफ लग जाता है ।

एक पत्रमें आनन्दीबाईने श्रीमती कारपेण्टरको लिखा था—"हिन्दूलोगोंकी साधारणतः जैसी शान्त प्रकृति होती है, वैसी योरपवालोंकी नहीं होती । हमलोगोंमें (महाराष्ट्रोंमें) योरप-वासियोंकी अपेक्षा रोगोंकी गिन्ती भी कम होती है, और काम क्रोधादि मनके विकारोंका प्रभाव भी थोड़ा होता है ।" और एक पत्र में उन्होंने लि-लिखा था-"योरपवासी समझते हैं, कि हिन्दूशास्त्रमें सभ्य जातियोंकी शिक्षाके योग्य कोई बात नहीं है । परन्तु यह उनका भ्रम है । मैं उनका भ्रम दिखानेके लिये संस्कृत पढ़ रही हूं । मैं देशी कपड़े पहनती हूं, देशी वस्तु व्यवहार में लाती हूं, और मांसादि नहीं छूती । मुझे बीबी बनना बिल्कुल पसन्द नहीं है । अतएव, आप कृपाकर लिखें, कि यदि मैं अमेरिकामें आकर रहना चाहूं, तो क्या मैं वहाँ भी अपने देशकी रीतिके अनुसार रह सकूंगी ?"

किसी किसी पत्रमें उन्होंने श्रीमती कारपेंटरको मिशनरियोंके विषयमें लिखा था, कि वे दूसरेके धर्म्मको बिगाड़नेवाले और संकीर्ण चित्तके मनुष्य होते हैं।

आनन्दीबाईका विश्वास भूत प्रेतपर बहुत था। इस विषयमें उन्होंने एक पत्रमें श्रीमती कारपेंटरको लिखा था,—"भूत प्रेत पिशाचादिपर दिनों दिन मेरा विश्वास बढ़ता जाता है। नींदमें मुझे अनेक बातें सूझती हैं। पाठ्यपुस्तकका जो टुकड़ा मुझे याद करना होता है, उसे मैं एकबार दिनमें पढ़ लेती हूं; फिर रातमें सो जाने पर स्वप्नमें उसे कई बार रटती हूं। सुबह उठकर देखती हूं, कि वह सब मुझे अच्छी तरह याद होगया है! कविता पढ़नेके समय जो जो अंश मुझे बहुत कठिन जान पड़ते हैं, उन्हें मैं एकबार पढ़कर छोड़ देती हूं, फिर रात्रिसमय, स्वप्नावस्थामें, उनका ठीक अर्थ आपही मालूम हो जाता है! प्रातःकाल उस अंशके समझने में कोई कठिनाई नहीं पड़ती। मैं नहीं जानती, कि रातमें इन कठिन बातोंका उत्तर मुझे कौन दे जाता है! आपसे सच कहती हूं, कि भूत प्रेतपर दिनोंदिन मेरा विश्वास बढ़ता जाता है।"

पत्र व्यवहारके द्वारा, श्रीमती कारपेंटर और आनन्दीबाईकी मित्रता क्रमशः बढ़तीही गयी। दोनोंही एक दूसरेको, अपने अपने देशकी बनी तरह तरहकी चीजें भेटमें भेजने लगीं। जबसे श्रीमती कारपेंटरके साथ उनका परिचय हुआ, तबसे आनन्दीबाईकी अंगरेजी भाषाकी योग्यता और भी बढ़ गयी।

इसी समय, बङ्गदेशके पोष्टमाष्टर-जनरलने डाक विभागमें स्त्रियोंके रखनेकी आज्ञा जारी की। उस आज्ञाको देखकर, डाक विभागमें आनन्दीबाईको नौकर रखा देनेकी गोपालरावकी इच्छा हुई। इस कारण, उन्होंने कलकत्तेमें अपनी बदली करा लेनेके लिये, डाक-विभागके अफसरोंको पत्र लिखे। इसके बाद १८८१ ईसवीकी चौथी अप्रेलको, गोपालराव, अपनी स्त्रीके सहित कलकत्तेमें जा पहुंचे।

कलकत्ते जाकर आनन्दीबाई बहुत बीमार हुईं। वहाँका जलवायु उनके अनुकूल नहीं था। उनको अधिक दुःख इस बातका हुआ, कि बङ्गदेशमें पर्देका कड़ा रिवाज होनेके कारण, वहाँके अनेक लोग उनकी चालचलन पर सन्देह करने लगे। कई पत्रोंमें उन्होंने, श्रीमती कारपेण्टरको कलकत्तेकी निन्दा लिखी थी। एक पत्र इस प्रकार था,—

"कलकत्तेमें हमलोगोंको बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है, यह बात मैं पहलेही आपको लिख चुकी हूं। मेरा स्वास्थ्य इतना खराब हो गया है, कि मैं जो कुछ खाती हूं, वह एक घण्टे भी नहीं पचता। दिनभर ज्वर चढ़ा रहता है, और शिरमें बड़ी पीड़ा रहती है। यह स्थान बहुत गर्म है! पानी बरसने लगा है, तोभी गर्मी नहीं घटती है! मेरे शरीरमें अनेक फोड़े निकल आये हैं, जिनसे मैं बहुत दुःखित हूं"।

"यहांके लोग हमलोगोंको बहुत दिक करते है। पड़ोसमें रहनेवाली एक जर्मन-स्त्री भी, मेरे सम्बन्धमें तरह तरहकी बुरी बातें कहती है। जब हमलोग घरसे बाहर निकलते हैं, तो अंगरेज, हमलोगोंको एकटक देखने लगते

हैं, और मेरी ओर अंगली उठाकर एक दूसरेसे कुछ कहते हैं । हिन्दुस्थानी और बङ्गाली भी कम कटाक्ष नहीं करते। हमलोगोंको खुल्लमखुल्ला मुंह उघाड़कर रास्तेमें चलते देख-कर, वे जाते जाते अपना गाड़ी रोक कर देखने लगते हैं। कोई कोई हमलोगोंके बहुत पाससे जाते हुए, गाड़ीवान्-को धीरे धीरे गाड़ी चलानेकी आज्ञा देते हैं, और हम-लोगोंको देख देखकर हँसते हैं ! मेरी समझमें बङ्गदेशमें कठिन पर्देका रिवाजही इन बातोंका कारण है। इस देशके जो लोग बहुत दिनोंतक इङ्गलण्ड और अमेरिकामें रहकर आते हैं, वे भी देशी रंग ढंग नहीं छोड़ते। एकदिन हमलोग 'एस्प्लेनेड' में टहल रहे थे; इतनेमें सहसाके एक कनष्टबलने आकर मेरे पतिसे मेरा परिचय पूछा ! इसपर उन्होंने उससे रुष्ट होकर कहा, कि मैं तुम्हारे बिरुद्ध पुलिस-कमिश-नरके यहां रिपोर्ट करूगा । तब वह क्षमा मांगके, और सलाम करके वहांसे चला गया।"

कलकत्तेमें एकबार एक सरकारी पत्र गोपालरावके हाथसे अकस्मात् खो गया। उसके लिये, वे नौकरीसे अलग कर दिये गये । इस घटनाके विषयमें आनन्दीबाईने श्रीमती कारपेण्टरको लिखा था, कि "हमलोगोंका अबतक वि-पत्तियोंसे छुटकारा नहीं हुआ है। पिछले ५ महीनोंसे हम-लोग जहा जाते हैं वहीं हमको कष्ट भोगना पड़ता है। एक कष्टसे बचाव होते न होते, दूसरी बिपत्ति आ धमकती है। बड़े लाटसाहबके यहांसे बङ्गालके छोटे लाटसाहबके नामका एक पत्र आया था। वह पत्र शिमलेसे खास सर-

कारी आदमीके द्वारा लाया गया था। मेरे स्वामीको वह पत्र रेलवे ष्टेशनपर जाकर डाकमें देनेकी आज्ञा मिली। इसलिये, वे उसे लेकर एक नौकरके साथ ष्टेशनकी ओर गये। वह पत्र उस समय उसी नौकरके हाथमें था। दोनों आदमी जल्दी जल्दी चले जाते थे, कि इतनेमें वह पत्र कहीं रास्तेमें गिरपड़ा! शीघ्रही उन्होंने उसे खोजना आरम्भ किया; किन्तु रास्ते भर तलाश करनेपर भी वह उनको नहीं मिला! इस घटनासे शहरमें जैसी हलचल मच गयी थी, उसका अनुमान आप स्वयं कह सकती हैं--मुझमें उसके वर्णन करनेकी सामर्थ्य नहीं है। इस विषयमें सरकारी अफसरोंकी एक सभा हुई थी। अनुसन्धानके लिये चारों ओर पुलिस दौड़ायी गयी थी। राहचलतुओंके कपड़े लत्तोंकी जांच कीगयी थी। सारांश यह, कि उसके लिये कोई बात उठा नहीं रखी गयी थी। परन्तु किसी तरह उस खोये हुए पत्रका पता नहीं चला! मेरे पति और उनका नौकर—दोनों पुलिसके हवाले किये गये। कई अफसरोंने अलग अलग उनके इजहार लिये। इसके बाद, मेरे स्वामी, अपने पदसे पृथक् कर दिये गये। मुझे इस विपद्‌की कहानी इस जन्ममें नहीं भूलेगी।"

इस दुर्घटनाके बाद, आनन्दीबाईने, पतिको रंगून और जापान होकर अमेरिका जानेकी सलाह दी। उत्तरीय भारतवर्ष के सब स्थानोंकी स्त्रियोंमें पर्देका कठिन रिवाज होनेके कारण, इस देशमें नौकरी करनेकी उनको इच्छा नहीं थी। दक्षिण-भारतमें जाकर भी आनन्दीबाईकी

शिक्षाका ठीक प्रबन्ध होनेकी सम्भवना नहीं थी । इन्हीं कारणोंसे, उन्होंने देश छोड़नाही निश्चय किया । किन्तु १८८२ ईसवीके अप्रेल महीनेकी पहली तारीखको, गोपालरावको रामपुरमें फिर नौकरी मिल गयी; इससे उनको अपना नया विचार कुछ दिनोंतक रोक रखना पड़ा । रामपुर आनन्दीबाईको कलकत्तेकी अपेक्षा अधिक पसन्द आया । वहांके लोगोंकी उन्होंने प्रशंसा भी की है । परन्तु वहांकी औरतोंके अधिक पान खानेपर तथा उनके वस्त्र पर, आनन्दीबाईने एक पत्रमें कटाक्ष भी किया है ।

आनन्दिबाईको डाक-विभागमें नौकर रखा देनेके लिये गोपालराव जो उद्योग कर रहे थे, वह इस समय सफल हुआ । आनन्दीबाईको उसी विभागमें ३०) रु० महीनेकी एक नौकरी मिल गयी । परन्तु इससे पहले, कलकत्तेमें सरकारी पत्रके खो जानेपर, उन्होंने अपने पतिकी जो दशा देखी थी, उससे उनको नौकरीसे एकबारही घृणा होगयी थी । इसीलिये, इसबार नौकरी मिलनेपर भी, उन्होंने उसे स्वीकार नहीं किया ।

रामपुरमें आने के बाद, कई महीनेकी छुट्टी लेकर, गोपालराव, अपनी स्त्रीके सहित जयपुर, आगरा, लखनऊ ग्वालियर, कानपुर, इलाहाबाद, बनारस आदि स्थानोंकी सैर करने गये थे। इस सैरमें आनन्दीबाईको बहुत कुछ अनुभव और आनन्द प्राप्त हुआ था ।

आनन्दीबाईकी भारतीय शिक्षा रामपुरमेंही समाप्त हुई । यहींसे वे डाक्टरी सीखनेके लिये अमेरिका गयीं ॥

तीसरा बयान।

गोपालराव अन्य विषयोंमें चाहे कैसेही हों, परन्तु एक बातमें वे बड़े दृढ़-प्रतिज्ञ थे। जब वे छोटे थे, तभीसे वे अपने देशकी स्त्रियोंकी भलाई करनेकी चिन्ता किया करते थे। परन्तु स्त्री-स्वाधीनता और स्त्री-शिक्षाके सम्बन्ध में उनके समयके संस्कारकोंने जो आन्दोलन मचाया था, उस (आन्दोलन) के पक्षपाती वे नहीं थे। केवल बातें बनानेकी अपेक्षा सचमुच स्त्रियोंका हित करना उन्हें अधिक पसन्द था। इस विषयमें अपनी सहधर्म्मिणीसे विशेष सहायता पानेकी आशासे, वे उसे शिक्षा दिलाकर अपने कामकी बना रहे थे। देशकी अवस्था देखकर, उनके मनमें यह बात समायी थी, कि अच्छी स्त्री-डाक्टरोंके अभावसे भारतीय महिलाओंको पद पदपर जैसा कष्ट उठाना पड़ता है, वैसा कष्ट किसी दूसरे कारणसे नहीं उठाना पड़ता। इस कारण, किसी दूसरी बातकी चिन्ता न करके, वे केवल इसी अभावके दूर करनेके लिये चुपचाप अपनी छोटी शक्तिको काममें ला रहे थे। उनका एक यह भी उद्देश्य था, कि स्त्रियोंको इस योग्य बना देना चाहिये, कि वे कठिन समयमें भी, विना किसी पुरुषकी सहायताके, अपना पेट भर लेनेके योग्य धन उपार्जन कर सकें। रामपुरसे आनन्दीबाईने श्रीमती कारपेण्टरको लिखा था—"डाक्टरी सीखकर, अपने देशका एक प्रधान अभाव दूर करनेके लिये मैं बहुत व्यग्र हो रही हूं। मैं यह अवश्य कहूंगी, कि

स्वामीके उपदेशसेही मेरे मनमें यह बात पैदा हुई है। उनका उपदेश मेरे हृदय-पटपर इस प्रकार जम गया है, कि मैं इस विचारको कभी नहीं बदल सकती।"

अपना यही उद्देश्य पूर्ण करनेके लिये, इस महाराष्ट्रीय दम्पतीने स्वदेश छोड़कर अमेरिका जानेका निश्चय किया था। केवल यही नहीं, वरन्, पाश्चात्य और देशीय चिकित्सा-विज्ञानको एक करके, देशकी वर्त्तमान अवस्थाके अनुसार जो चिकित्सा-प्रणाली विशेष उपयोगी हो, उसीके अनुसार चिकित्सा करनेका आनन्दीबाईने पहलेहीसे संकल्प करलिया था। परन्तु धनके अभावसे बहुत दिनों तक वे सफल-मनोरथ नहीं हुई थीं। कलकत्तेमें जाकर गोपालराव नौकरीसे अलग किये गये। उस समय, अपने देशको न जाकर, अमेरिका जानेकी तय्यारी वे करने लगे। किन्तु कुछही दिनोंमें वे निर्दोष समझे गये, और फिर उनको नौकरी मिल गयी। अतएव, कुछ कालके लिये, आनन्दीबाईका अमेरिका-जाना रुक गया।

रामपुरमें कुछ दिनोंतक रहनेके बाद, गोपालरावने अपनी स्त्रीके सहित अमेरिका जानेके लिये डाकविभागसे दो वर्षकी छुट्टीकी प्रार्थना की। उन्होंने सोचा, कि यदि उनको दो वर्ष तक अमेरिकामें रहनेका सुयोग मिलेगा, तो इस 'दो वर्ष' के बीचमें आनन्दीबाईकी शिक्षा समाप्त हो जायगी। किन्तु छुट्टीकी अर्जी अस्वीकृत हुई; इसलिये उनके संकल्पमें बाधा पड़ गया; तौभी गोपालराव विचलित नहीं हुए। बहुत सोचने विचारनेके पश्चात्,

उन्होंने आनन्दीबाईसे कहा—"मेरी समझमें अब वृथा समय नष्ट करनेकी कोई आवश्यकता नहीं जान पड़ती। अतएव, तुम अकेलेही अमेरिकाको चली जाओ! मैं कुछ दिनके बाद वहां तुमसे मिलनेकी चेष्टा करूंगा।"

पतिकी बात सुनकर आनन्दीबाईको आश्चर्य्य हुआ। परन्तु, उनके कुछ उत्तर देनेसे पहलेही, गोपालरावने कहा "आजतक कोई ब्राह्मण-पत्नी विदेशमें अकेले नहीं गयी है; अतएव तुम सबकी पथ-प्रदर्शिनी बनो। अमेरिकामें जाकर, और स्वदेशीय रीतिनीतिमें बिलकुल अन्तर न डाल कर, तुम अपने व्यवहार-गुणसे वहांवालोंको भी हिन्दू-रीतिनीतिका पक्षपाती बनाओ। विदेशके लोग कहते हैं, कि भारतवर्षकी स्त्रियोंके द्वारा कोई बड़ा काम नहीं होता; सो तुम अमेरिकामें जाकर, उनकी बातको असत्य प्रमाणित कर दो। इस देशके अनेक संस्कारक, स्त्रियोंके लाभके लिये, केवल मौखिक आन्दोलन बहुत दिनोंसे कर रहे हैं; किन्तु आजतक इसके लिये वे कोई उत्तम उपाय नहीं सोच सके हैं। मेरी इच्छा है, कि तुम इस कठिन कार्य्यका कुछ अंश समाप्त करके, सबके लिये उदाहरण बनो।"

स्वामीके उपदेशसे, आनन्दीबाईके हृदय-क्षेत्रमें, स्वदेशहितैषिताका बीज इससे पहलेही अंकुरित हो चुका था। इस कारण, इस बार उनकी आज्ञा पातेही, उन्होंने अमेरिका-जाना स्वीकार किया। इसके बाद, यद्यपि पतिसे बिछुड़ने और परदेशमें कष्ट पानेकी चिन्ता करनेसे वे कई बार विचलित हुईं; किन्तु भगवानूका दृढ़ विश्वास

करके, और कर्त्तव्य पालनकी अटल वासना रखके, उन्होंने अपना संकल्प भंग नहीं किया। इस विषयमें श्रीमती कारपेण्टरको उन्होंने जो पत्र लिखे थे, उनमें पति-वियोग के कारण उद्वेग, धनके अभावके हेतु दुःख, अमेरिका भेजनेमें उनके आत्मीय सम्बन्धियोंकी आपत्ति, पातिव्रत धर्म्म के बिगड़नेकी आशङ्का, उनके चित्तकी दृढ़ता, स्वदेश-भगिनियोंके कल्याण-साधनमें उत्साह, आदि अनेक बातें झलकती थीं। एकपत्र में उन्होंने अपना अन्तिम सिद्धान्त इस प्रकार लिखा था,—

"मैंने प्रतिज्ञा करली है, कि जिस कामके लिये मैं अमेरिका जाती हूं, वह काम यदि सुसिद्ध हुआ, तो मैं अपने देशको लौट आऊंगी; परन्तु यदि मैं उसमें सफल न हुई, तो फिर भारतवर्षमें किसीको मुंह न दिखाऊंगी। प्राचीन कालकी हिन्दू रमणियाँ कैसी बुद्धिमती, वीर और परोपकार-करनेवाली थीं, यह मैं जानती हूं। उसी वंशमें जन्म पाकर, मैं उनके नामको कदापि कलंकित नहीं करूंगी। जैसे बनेगा, वैसेही मैं अपने कर्त्तव्यका निर्वाह करूंगी। मुझे निश्चय है, कि किसी प्रकारसे कोई मेरी हानि न कर सकेगा। कारण यह, कि एकमात्र ईश्वरके सिवा, कोई भी किसीको हानि अथवा लाभ नहीं पहुंचा सकता। जब हम सब ईश्वरके सन्तान हैं, तब मुझको कष्ट क्यों उठाना पड़ेगा? मैं अपने कर्त्तव्यका पालन अवश्य करूंगी। चाहे मेरे प्राण बचें या न बचें, मैं संकल्प-च्युत न होऊंगी। * * * मेरी यही प्रार्थना है, कि मैं जिनके मकानमें वहां रहूं, वे

मुझको अपनी लड़कीकी तरह समझें। मैं वहां अपनेही हाथोंसे अपने लिये भोजन बनाऊंगी। इसमें खर्च भी कम बैठेगा।" पाठक ! इस समय उस वीरबालाकी अवस्था केवल १७ वर्षकी थी !

गोपालराव बम्बईकी थियोसफिकल सोसाइटीके सभ्य थे। इस कारण, आनन्दीबाईके अमेरिका जानेका हाल सुनकर, कर्नल आलकट्ने, अमेरिकाके एक विचार-पतिके नाम एक अनुरोधपत्र लिखकर उनको दे दिया। इसके बाद, अमेरिका जानेवाले किसी भले आदमीके साथ की खोज करने तथा अन्य कई बातोंमें बहुत दिन बीत गये। इधर आनन्दीबाईके अमेरिका जानेका समाचार, संबाद-पत्रोंमें पढ़कर उनके आत्मीय सम्बन्धी अनेक प्रकारसे उनके इस काममें बाधा देने लगे। जो लोग पहले बड़े भारी हितैषी थे, उनमेंसे भी अनेक, इस अवसरपर उनके शत्रु बन गये। परन्तु आनन्दीबाईने कदापि अपना इरादा नहीं तोड़ा।

आनन्दीबाईके अमेरिका जानेके कारणके सम्बन्धमें अनेक महाशय अनेक प्रकारके प्रश्न उनसे करने लगे। उन सब प्रश्नोंका उत्तर देनेके लिये, आनन्दीबाईने स्थानीय विद्यालयमें एक सभा की, और वहां उन्होंने अङ्गरेजी-भाषामें स्पीच (वक्तृता) दी। वह वक्तृता, उस समयके अधिकांश देशी और अङ्गरेजी पत्रोंमें प्रकाशित हुई थी। सत्रह वर्षकी ब्राह्मण-युवतीको, प्रकाश्य सभामें अङ्गरेजी-भाषामें वक्तृता देते देखकर, अनेक मनुष्य मुग्ध होगये थे।

उस दिनकी वक्तृतामें आनन्दीबाईने जिन छः प्रश्नोंका उत्तर दिया था, वे ये हैं,—

(१) मैं क्यों अमेरिका जाती हूं ?

(२) भारतवर्षमें रहकर क्या शिक्षापाना असम्भव है?

(३) मैं अकेली क्यों जाती हूं ?

(४) अमेरिकासे लौट आने पर क्या मैं जातिच्युत न करदी जाऊंगी ?

(५) यदि विदेशमें मुझपर किसी प्रकारकी विपद् पड़ेगी, तो मैं क्या करूंगी ?

(६) आजतक जिस कामको किसी स्त्रीने नहीं किया, उस काममें, मैं क्यों हाथ डालती हूं ?

प्रथम प्रश्नके उत्तरमें उन्होंने कहा कि, "इस देशकी स्त्रियोंमें जिन जिन बातोंका आव है, उन अभाओंमेंसे सबसे बड़ा अभाव 'चिकित्सा शास्त्र' का न जाननाही है। इस देशकी अनेक सभा समितियोंने, स्त्री-शिक्षा, स्त्री-स्वाधीनता और शिल्प-कला विज्ञानादिकी फैलावटके लिये अवश्य उद्योग किया; किन्तु देशीय रमणियोंको अमेरिका जैसे सभ्य देशमें भेजकर, वहां उनको चिकित्सा-शास्त्र सिखाकर उनके द्वारा इस देशमें चिकित्सा-विद्याके प्रचारका उद्योग किसी ने नहीं किया। योरपीय अथवा अमेरिकन डाकृरिनें इस देशकी रीतिनीतिके विषयमें कुछ नहीं जानतीं, और वे भिन्न-धर्म्मावलम्बिनी हैं; इस कारण, उनके द्वारा वैसा काम नहीं होता, जैसा होना चाहिये। भारतीय महिलाओंके इसी बड़े भारी अभावके दूर करनेके

लिये, मैं स्वयं अमेरिकामें डाक्टरी-विद्या सीखनेके लिये जाती हूं।"

दूसरे प्रश्नके उत्तरमें उन्होंने जो कुछ कहा, उसका मर्म्म यह है,—"मन्द्राजके सिवा, भारतवर्षके अन्य किसी स्थान में डाक्टरी-विद्या सिखानेका अच्छा कालेज नहीं है। दूसरी जगह इस विषयके जो स्कूल हैं भी, वहां केवल धात्री-विद्या सिखायी जाती है। मन्द्राजमें भी हिन्दू रमणियोंकी शिक्षाका कोई विशेष बन्दोबस्त नहीं है। मैं डाक्टरी सीखने के लिये दूसरा धर्म्म ग्रहण करना नहीं चाहतीं। अतएव, इस देशमें शिक्षा पानेका कोई सुभीता मुझे दिखाई नहीं देता।" बम्बई, कलकत्ता और रामपुरमें, दुष्टों तथा इतर लोगोंने उनकी हँसी उड़ाकर उनको किस प्रकार दुःखित किया था, और अनेक भद्र-नामधारी महाशय, उनको कष्ट देदेकर किस तरह सन्तुष्ट होते थे, इस बातका वर्णन भी उन्होंने इस समय कर दिया, और कहा, कि अमेरिका में ऐसी बातोंका सामना मुझे नहीं करना पड़ेगा।

तीसरे प्रश्नके उत्तरमें उनको अपने स्वामीकी दरिद्रता का वृत्तान्त कहना पड़ा। इसके सिवा, उनके श्वशुर, सास, और छोटे छोटे देवरोंके भरणपोषणके लिये, उनके स्वामी-हीको खर्च देना पड़ता था। ऐसी दशामें, उन सबको असहायावस्थामें छोड़कर, स्त्रीकी रक्षाके लिये अमेरिका जाना, गोपालरावने उचित नहीं समझा।

अमेरिका जानेके कारण, सामाजिक दण्डके विषयमें उन्होंने कहा,—"मैं नहीं समझती, कि जब मैं वहां जा-

कर बिल्कुल हिन्दू-रीतिसे रहूंगी, तब, लोग मुझको जाति-च्युत क्यों करेंगे ! मैंने निश्चय करलिया है, कि खाने पीनेमें, चाल ढालमें, कपड़े लत्तेमें, रीति नीतिमें, मैं अपने पूर्व-पुरुषोंका अनुकरण करूंगी। जहां कहीं मुझे जाना पड़ेगा, वहां मैं स्मरण रखूंगी, कि मैं 'हिन्दू' रमणी हूं। इतने-पर भी कोई मुझको जातिच्युत—समाजच्युत करना चाहे, तो वह, अभी—इसी समय कर सकता है। इसके लिये मुझको जरा भी भय नहीं है।"

पांचवें प्रश्नके सम्बन्धमें उन्होंने कहा, कि विपत्ति स्वदेश विदेश सर्वत्रही आती है, और आ सकती है। परन्तु विपत्तिके भयसे, देशहितकर कार्य्योंसे मुंह मोड़ना किसीको भी उचित नहीं है।

अन्तिम प्रश्नके उत्तरमें उन्होंने कहा—"जिस समाज में मैं वास करती हूं, जिस समाजसे मुझे अनेक प्रकारकी सहायता प्राप्त होती है, उस समाजके हितसाधनके लिये, उसके किये हुए उपकारोंका बदला चुकानेके लिये, कष्ट स्वीकार करना हरेकका कर्त्तव्य है। दूसरोंने इस कामके करनेकी कोई इच्छा प्रकट नहीं की, इसीसे मैं इसके लिये तय्यार हुई हूं।"

इसके बाद, शिक्षित समाजके अनेक मनुष्योंने पत्र लिखकर, आनन्दीबाईको बहुत कुछ उत्साहित किया था। डाक-विभागके डिरेक्टरने, यह समाचार सुनकर, उनकी सहायताके लिये १००) रु० का एक नोट उनके पास भेजा था। अमेरिकाके युक्त-राज्यके कलकत्तेमें रहनेवाले राज-

दूतने, अमेरिकाके दो प्रतिष्ठित व्यक्तियोंके नाम अनुरोध-पत्र लिखकर, उनको देदिये थे। इतनाही नहीं, वरन्, उन्होंने आनन्दीबाईका सचित्र जीवनचरित भी अमेरिकाके किसी समाचारपत्रमें छपवा दिया था। उन दिनों डाक्टर थोवर्न नामक एक अमेरिकन पादरी कलकत्तेमें रहते थे। उक्त डाक्टर थोवर्नने भी, अपने अमेरिकावासी बन्धुओंके नाम कई अनुरोध-पत्र लिखकर, आनन्दीबाईको दे दिये थे।

सन् १८८३ ई० के अप्रेल मासकी ७ वीं तारीखको, आनन्दीबाईका अमेरिका जाना स्थिर हुआ। पहलेहीसे गोपालरावने उनके साथ 'अदन' अथवा कमसे कम 'मन्द्राज' तक जाना निश्चय किया था। परन्तु, धन और अवकाशके अभावसे, उनको अपना यह इरादा भी बदलना पड़ा। अन्तमें श्रीमती जान्सन नामी एक स्त्रीने आनन्दीबाईको अपने साथ ले जानेकी प्रतिज्ञा की। 'फिलाडेल्फिया' नामक स्थान में 'ओल्ड स्कूल' नामक एक चिकित्सा-विद्यालय है। वहां पढ़ने और पढ़ानेवाली स्त्रियांही हैं; पुरुष नहीं। आनन्दीबाईने अमेरिका जाकर उसी विद्यालयमें डाक्टरी सीखना निश्चय किया।

इसके बाद यात्राकी तय्यारियां आरम्भ हुईं। अमेरिकामें इस देशकी चीजें नहीं मिलतीं; इसलिये आनन्दीबाईने चूड़ी, टिकुली, देशी कपड़े, मराठी साड़ी, देशी सिन्दूर, आदि अनेक वस्तुएँ लेकर अपने पास रख लीं। आनन्दीबाई विलायती वस्तुओंका बड़ा विरोध करती थीं। इसी कारण, उन्होंने, तीन वर्ष तक व्यवहारमें आने-

योग्य सामग्री भारतवर्षमेंही खरीद ली। अमेरिकामें यहां की अपेक्षा अधिक सर्दी पड़ती है। वहां हलके कपड़ोंसे काम नहीं चल सकता; यह सोचकर, आनन्दीबाईने जामा, पञ्जाबी धुस्से आदि कई तरहके मोटे ऊनी कपड़े अपने पास रख लिये। अमेरिकावालोंको दिखलानेके लिये, उन्होंने रामचन्द्र, शङ्कर, पार्वती आदिके चित्र भी अपने संग ले लिये। आजकल जिस ठाटबाटसे हमारे भारतीय युवक विलायत जाते हैं, उस ठाटबाटका लेश भी आनन्दीबाईमें नहीं था। वे आश्रमचारिणी तपस्विनी ऋषिकन्याकी तरह ज्ञानलाभके लिये बड़ी पवित्रताके साथ खुष्टराज्य अमेरिकामें गयी थीं। यौवनावस्थामें चित्तका ऐसा धीर और गम्भीर होना अत्यन्त दुर्लभ है।

छठीं अप्रेलको रातके ११ बजे तक यात्राकी सब तय्यारियां समाप्त करके, दिनभरके कड़े परिश्रमके बाद, आनन्दीबाई चारपाईपर जा लेटीं। उस रात गोपालरावको नींद नहीं आयी। सत्रह वर्षकी युवती स्त्रीको देशके और खासकर उसके हितके लिये समुद्र-पार भेजनेकी तय्यारी करके, उन्होंने अच्छा काम किया है या बुरा; अपने हृदय का स्नेहसर्वस्व देकर, इतने दिनोंतक पालपोसकर जिसको उन्होंने इतना बड़ा किया है, विदेशमें उसकी रक्षा कौन करेगा; वे अपनी प्रियतमा बिना अकेले किस तरह रह सकेंगे,—इत्यादि बातें सोचते सोचते, गोपालरावने वह रात बिता दी!

पासके गिर्जेकी घड़ीमें 'टन टन टन' तीन बजतेही,

गोपालरावने अपनी सहधर्म्मिणीको जगाकर, उसको यात्राके लिये तय्यार होनेकी आज्ञा दी। आनन्दीबाईके चारपाईसे उठतेही, उनसे बिछुड़नेके शोकमें गोपालरावका गला भर आया। थोड़ीही देरमें प्यारे स्वामी और मातासदृशी जन्मभूमिको न जानें कितने दिनोंके लिये छोड़कर, बहुत दूर चला जाना पड़ेगा,—यह सोचकर आनन्दीबाई भी बहुत दुःखित हुईं; उनका गला भी भर आया, और उनमें भी बात करनेकी शक्ति न रही। आत्मीय बन्धुओंसे यथायोग्य कहके, गाड़ीपर चढ़के, शोक-गम्भीर चित्तसे वे अपने पतिके साथ बन्दरकी ओर चली गयीं। रास्तेभर दोनों चुपचाप एक दूसरेका मुंह देखते रहे; किसीके मुंहसे भी किसी प्रकारका शब्द नहीं निकला।

बन्दरमें पहुंचकर, आनन्दीबाई ष्टीमरपर सवार हुईं। श्रीमती जान्सनके अधिकारमें आनन्दीबाईको सौंपकर गोपालरावने कहा—"आपकी केवल इतनी चेष्टासे, कि कम खर्च और पूरे आरामके साथ मेरी स्त्री अमेरिका पहुंच जाय, मैं बहुत सुख पाऊंगा।" यह बात सुनकर श्रीमती जान्सनके पति मिष्टर जान्सनने कहा—"यह नहीं हो सकता। मेरी स्त्रीके साथ रहकर तुम्हारी स्त्रीको मेरीही स्त्रीकी तरह खर्च करना पड़ेगा!" इस उत्तरसे गोपालरावके हृदयमें बड़ी चोट पहुंची; किन्तु कुछ विशेष कहने सुननेका समय नहीं था; इसलिये आनन्दीबाईको सावधान करके, अन्तमें उन्होंने कहा—"तुम करुणामय सर्वसाक्षी परमेश्वर पर भरोसा कर, निर्भय होके रहना।"

इसके उपरान्त, वहां न ठहर सककर, आंसू पोंछते हुए गोपालराव घर आये। इधर आनन्दीबाईको बड़ा शोक हुआ। वे अपनेको रोनेसे न रोक सकीं। आंसुओंके प्रबल वेगसे उनके दोनों गाल और छातीके ऊपरके कपड़े भींग गये। जबतक ष्टीमरने बन्दरको नहीं छोड़ा, तबतक उनकी दृष्टि बराबर घरकी ओर जाते हुए गोपालरावपर लगी रही। गोपालरावके बहुत दूर जाकर अन्तर्धान होजानेपर भी, आनन्दीबाई कठपुतलीकी तरह उसी ओर देखती रहीं।

इसी तरह, देशके हितके लिये अपनी प्राणप्रतिमा को छोड़कर, गोपालराव रोते हुए घर आये। इसके बाद उनकी दशा ठीक वैसीही हुई, जैसी कि सीतादेवीके अन्तर्धान होनेपर रामचन्द्रकी हुई थी। तीन महीनेकी छुट्टी लेके और सन्यासीके वेशमें भारतवर्षके अनेक स्थानोंमें घूमके, उन्होंने चित्तको शान्त करना चाहा। उस समय उनको ऐसा शोक हुआ था, कि किसी स्थानमें दो दिनसे अधिक वे नहीं ठहरे थे॥

चौथा परिच्छेद ।

ष्टीमरपर चढ़तेही, आनन्दीबाईको शोक, चिन्ता, दुःख आदिने आ घेरा । एक तो प्रियजनोंसे बिछुड़ने और विदेशमें जाकर कष्ट पानेकी चिन्ता उनको थीही, दूसरे समुद्रपीड़ासे उनका शरीर अस्वस्थ होही रहा था, कि उसके ऊपर श्रीमती जान्सनके दुर्व्यवहारने उनको और भी दुःखित किया । श्रीमती जान्सन पादरिन थीं, खृष्टधर्म्मका प्रचार करनेके लियेही, वे अपने स्वामीके सहित भारतवर्षमें आयी थीं । उनके उद्योगसे इस देशके कितने मनुष्य खृष्टान होगये थे, यह तो नहीं मालूम; किन्तु आनन्दीबाईको खृष्टधर्म्मावलम्बिनी बनानेके लिये उन्होंने उनको जिस जिस तरहसे दुःख दिया था, उसका हाल पढ़नेसे पादरियों और पादरिनोंपर बड़ा क्रोध आता है । ष्टीमरपर चढ़नेके बाद, पहले मीठी मीठी बातें सुनाकर, फिर लालच दिखाकर, और अन्तमें बहुत डरा धमकाकर बेचारी आनन्दीबाईको उन्होंने खृष्टान बनाना चाहा; परंतु आनन्दीबाईने किसी तरह अपना धर्म्म त्याग करना स्वीकार नहीं किया ।

इसके बाद, दूसरी दूसरी तरहसे उनको कष्ट दिया गया । उस ष्टीमरका इञ्जीनियर, श्रीमती जान्सनकी सहायतासे, आनन्दीबाईका सतीत्व नष्ट करनेकी चेष्टा करने लगा । जब कभी वह पापिष्ट उनको अकेले देखता, तो उनसे हँसी दिल्लगी करने लगता, और नीचेके हिस्सेमें

चलकर इञ्जिन आदि देखनेके लिये कहता । इसपर यदि साहबकी बदमाशीको समझकर, आनन्दीबाई उसकी प्रार्थना स्वीकार न करतीं, तो श्रीमती जान्सन उनको बुरा भला कहने लगतीं, और नीचे जानेके लिये बहुत अनुरोध करतीं; परन्तु आनन्दीबाई किसी तरह उनकी बातोंमें न आयीं। जब दुष्ट इञ्जीनियरने अपना मतलब सधते न देखा, तब वह एक सोनेकी घड़ी आनन्दीबाईके पास लाया और बोला,—“आपका परिश्रम और उद्योग देखकर मैं बहुतही विस्मित हुआ हूं । यह घड़ी अमेरिकामें पढ़नेके समय आपके काम आवेगी; अतएव मेरी इस तुच्छ भेंटको स्वीकार कीजिये।” साध्वी आनन्दीबाईने उसका प्रस्ताव अस्वीकृत किया ।

आनन्दीबाईकी ऐसी सच्चरित्रता देखकर, श्रीमती जान्सन उनसे बहुत असन्तुष्ट हुईं ! उसी समयसे, आनन्दी बाईपर उनका क्रोध, अधिकाधिक बढ़ने लगा । इस बीच में आनन्दीबाईके दाँतोंमें पीड़ा उत्पन्न हुई। इस अवस्था में उनको कई दिनतक निराहार रहना पड़ा; परन्तु आश्चर्य्य की बात है, कि कठोर-हृदया श्रीमती जान्सन, इस अवधि में एकदिन भी उनको देखनेके लिये उनकी कोठरीमें नहीं गयीं ! ष्टीमरकी अन्यान्य गोरी बीबियोंने भी, मिसेज जान्सनकी तरह, उनकी सुधि नहीं ली । केवल इतनाही नहीं, वरन् जैसा व्यवहार दास दासियोंके साथ किया जाता है, वैसाही व्यवहार, वे आनन्दीबाईके साथ करने लगीं ! यदि आनन्दीबाई मांसादि गन्दी चीजें खानेसे इन्कार

करतीं, तो वे सब उनको दिक करतीं—उनको दुःख देतीं और उनसे ठिठोली करतीं। और तो क्या, कभी कभी उनमेंसे दो एक, आनन्दीबाईको उनकी कोठरीमेंसे बाहर खींच लानेकी भी चेष्टा करतीं। परन्तु जब अनेक प्रकारके कष्ट सहकर भी, बेचारी आनन्दीबाई किसीसे कड़ाईके साथ बोलीं तक नहीं, तब उनमेंसे बहुतेरी उनके साथ मैत्री करनेपर तय्यार हो गयीं। किन्तु मिसेज़ जान्सनका स्वभाव न बदलनेको था, न बदला। सच है, दुष्ट अपने दुष्टपनेको नहीं तज सकता।

जबतक आनन्दीबाई ष्टीमरपर रहीं, तबतक उन्होंने प्रतिदिन २-३ आलूके सिवा, और कुछ नहीं खाया। इसी तरह १० वीं मईको लन्दन और १६ वीं मईको वे लिवरपूल में पहुंच गयीं। वहां दो एक दिन ठहरकर, अमेरिका जाने वाले ष्टीमरपर सवार हुईं। श्रीमती जान्सनने उस समयतक भी उनका पीछा नहीं छोड़ा। जब ष्टीमर अमेरिकाके बहुत पास पहुंच गया, तो उन्होंने आनन्दीबाईसे कहा—"मिसेज़ जोशी! तुम्हारे पतिने तुमको मेरे हाथ में सौंप दिया है, इस कारण, मिसेज़ कारपेण्टरका तुमपर कोई अधिकार नहीं है। चाहे तुम्हारी इच्छा हो या न हो, मैं तुमको अपने पास रख सकती हूं।" इसके बाद उस दुष्टाने, श्रीमती कारपेण्टरकी बहुत निन्दा करके, आनन्दी बाईका मन उनकी ओरसे फेरना चाहा। जब आनन्दीबाईने किसी तरह नहीं माना, तब वह मिसेज़ कारपेण्टर के विषयमें कहने लगी, कि वे चोर दुष्ट असभ्य और खूनी

हैं! इसके बाद भी मिसेज़ जान्सनने 'बोष्टन' नगरमें ले जाकर, उनको खुष्टधर्म्ममें दीक्षित करनेकी बहुत चेष्टा की; परन्तु आश्चर्य्यका विषय है, कि इतना कष्ट—इतना उपद्रव सहकर भी आनन्दीबाईने बहुत दिनोंतक मिसेज़ जान्सनकी शिकायत अपने पतिको नहीं लिखी। इतना-ही नहीं, वरन् उन्होंने बराबर उनकी प्रशंसाही की! अमेरिका पहुंचनेके बहुत दिनोंके बाद, बात आ पड़नेपर उन्होंने अपने पतिको इस विषयमें एक पत्र लिखा था, जिसका भावार्थ नीचे प्रकाशित किया जाता है,—

"आजतक मैंने जो बात आपसे छिपा रखी थी, वही आज कहती हूं। श्रीमती जान्सनके दुर्व्यवहारका पूरा पूरा हाल लिखनेकी मैंने कई बार चेष्टा की; परन्तु ऐसा करनेमें मुझे बहुत कष्ट हुआ; यहां तक कि दो एक बार आधा पत्र लिखकर भी मैंने फाड़ डाला, और आंसू बहाकर अपने चित्तको शान्त किया! अस्तु, उस विषयमें दो एक बात लिखती हूं।" इस पत्रमें भी सब बातें विस्तारपूर्वक वे न लिख सकीं। बहुत दुःख भोगकर भी, क्षमाशीला आनन्दी बाईने, दूसरेकी निन्दा नहीं की।

यथासमय आनन्दीबाई "रोशल" के पासवाले बन्दर में पहुंच गयीं। उनको लेनेके लिये, श्रीमती कारपेण्टर पहलेहीसे वहां उपस्थित थीं। आनन्दीबाईके ष्टीमरपरसे उतरतेही दोनोंका साम्हना हुआ। फिर वहांसे दोनोंने रेलपर चढ़कर रोशलकी ओर यात्रा की। इस प्रथम साक्षात्कारके समय आनन्दीबाईका व्यवहार देखकर,

श्रीमती कारपेण्टरने उनके विषयमें निम्नलिखित राय लिखी थी,—

"आनन्दीबाई कभी प्रयोजनके अतिरिक्त बातें नहीं करतीं। वे बहुत चुप्पी भी नहीं हैं। उनके समान गम्भीरता बड़ी बूढ़ी स्त्रियोंमें भी नहीं पायी जाती। मेरी समझमें, इतनी छोटी उमरमें किसी दूसरेका इतना गम्भीर होना असम्भव है। आनन्दीबाईसे जब पहलेपहल बन्दरमें मेरा साक्षात् हुआ, उस समय मैंने सोचा, कि ये भी दूसरी चञ्चल-प्रकृति बालिकाओंकी तरह गाड़ीमेंसे बार बार मुंह निकालकर चारो ओर देखेंगी, और हरेक नवीन वस्तुके विषयमें अनेक प्रकारके प्रश्न कर मुझे विरक्त कर देंगी; परन्तु उन्होंने इस ढंगकी कोई बात नहीं की। वे बड़े गम्भीर भावसे गाड़ीमें बैठी रहीं। अनेक बार मैंने अनुमान किया, कि अब वे अवश्य कोई न कोई बात मुझसे पूछेंगी, किन्तु आजतक उन्होंने किसी विषयमें भी, मुझसे कोई प्रश्न नहीं किया! ऐसा न करनेका कारण, उनकी बुद्धिकी स्थूलता नहीं कही जा सकता। पीछे उनसे इस विषयमें मुझसे जो बातें हुईं, उन बातोंसे मुझे मालूम हुआ, कि उनकी बुद्धि बहुत तीक्ष्ण है; क्योंकि इस अपरिचित देशमें उन्होंने एकबार भी जो चीज देखी, उसका मतलब, वे आपही समझ गयीं। उन्होंने बड़ी सूक्ष्मता और बड़े शान्तभावसे सब बातोंकी जाँच की थी। यहां आकर, और नित्य नये नये रंगढंग देखकर भी, उन्होंने उस विषयमें सवाल जवाब करके मुझे दुःखित नहीं किया। उनके

व्यवहारमें, उनकी चालचलनमें, मुझे कोई दोष नहीं दिखाई दिया। उनकी कार्य्य-कुशलता, उनकी एकाग्रता, उनके सदाचारादि गुण, सबके अनुकरण करनेके योग्य हैं।"

अमेरिकामें पहुंचकर, आनन्दीबाई, श्रीमती कारपेण्टरके साथ सबसे पहले 'न्यूजर्सी' नगरमें उनके घर गयीं। वहां उनको चार महीनेतक रहना पड़ा। वहां रहकर, थोड़ेही दिनोंके बीचमें वे श्रीमती कारपेण्टरके घरानेके सभी लोगोंकी प्रीतिपात्री बनगयीं। उस घरके बालक बालिकादि, एक क्षणके लिये भी, अपनी इस हिन्दू बहिनसे पृथक् होना नहीं चाहते थे! अड़ोस पड़ोसकी स्त्रियां भी आनन्दीबाईका बहुत पक्षपात करने लगी थीं। विदेशमें जाकर नामहँसाईके डरसे, अंग्रेजी ढंगपर कपड़े पहनने और अंग्रेजी चाल पर कामकाज करनेकी बात तो दूर रहे—आनन्दीबाईने अपने व्यवहार-गुणसे, श्रीमती कारपेण्टरके घरके लोगोंकी चाल भी बहुत कुछ हिन्दुस्थानी ढंगकी करदी। वे कभी भी श्रीमती कारपेण्टरको नाम लेकर नहीं पुकारती थीं। अमेरिका क्या समस्त पाश्चात्य देशोंके मनुष्य बड़े लोगोंको उनका नाम लेकर पुकारते हैं; और तो क्या—वहां पुत्र भी पिताको नाम लेकर पुकारनेमें सङ्कोच नहीं करता। किन्तु इस विषयमें आनन्दीबाईका आचरण देखकर, श्रीमती कारपेण्टरके परिवारके लोग, हिन्दू-रीति नीतिका श्रेष्ठत्व भलीभांति समझ गये। प्रातःकाल 'शेकहैण्ड' (हाथ मिलाने) के बदले, नमस्कार और आशीर्वाद करनेकी प्रथा भी उन

लोगोंने ग्रहण की। आनन्दीबाईने कारपेण्टर-परिवारके हेलेना, ष्टुअर्ट, ट्रेसी आदि नामोंको बदलकर, तारा सगुणा और प्रमीला प्रभृति नाम रखे। इतनाही नहीं,— उन्होंने अपनी अनेक सङ्गिनियोंको भारतवर्षकी बनी साड़ीकी पक्षपातिनी भी बना दिया। तिसपर विशेषता यह, कि उनमेंसे अनेक स्त्रियोंने सिन्दूर और टिकुली लगाना भी स्वीकार किया। श्रीमती कारपेण्टरके घरमें देशी साड़ीका माहात्म्य इतना अधिक बढ़ा, कि बालक बालिकागण अपने खिलैानोंको भी बिना साड़ी पहनाये सन्तुष्ट न हुए!

आनन्दीबाईके भारतवर्ष छोड़नेके कुछ दिनोंके बाद गोपालरावने उनको एक पत्रमें लिखा, कि यदि प्रयोजन हो तो तुम विदेशी ढंगके कपड़े पहन और मांसादि खा सकती हो। परन्तु आनन्दीबाईको स्वदेशीय आचार व्यवहारके साथ इतनी गाढ़ी प्रीति थी, कि अमेरिका जैसे शीत-प्रधान देशमें रहकर भी, उन्होंने कभी मांस नहीं खाया। जब वे स्वस्थ रहती थीं, तब अपनेही हाथोंसे 'दाल रोटी' आदि भोजन तय्यार करती थीं। अमेरिका देशमें अधिक शीत पड़नेके कारण, उनको अपने पहनावेमें कुछ थोड़ासा परिवर्त्तन करना पड़ा था। महाराष्ट्रीय ढंगपर साड़ी पहननेमें, दोनों पांवोंके नीचे का कुछ हिस्सा खुला रहता है; इसलिये, उन्होंने वहां (अमेरिकामें) जाकर, गुजराती चालपर साड़ी पहनना आरम्भ किया था। परन्तु स्वदेशको लैाटते समय, जहाजपर चढ़तेही,

उन्होंने पुनः महाराष्ट्रीय ढंगकी साड़ी पहन ली थी । विदेश में देशी कपड़े पहननेके कारण, इंगलैण्ड, आयरलैण्ड और अमेरिकामें, उनको, दुष्टोंके द्वारा दुःखित भी होना पड़ा था । हमारे देशके वे बाबू लोग, जो विलायत जाते समय यह सोचकर, कि वहां भी देशी ढंगपर कपड़े पहनेंगे तो वहांके लोग हमपर हँसेंगे और ठट्ठा मारेंगे, विलायती कोट पैण्ट पहन लेते हैं, और फिर वैसाही अभ्यास पड़ जानेके कारण अपने देशमें आकर प्रचण्ड ग्रीष्म ऋतुमें भी शरीरपर गधेकी तरह मोटे मोटे कपड़े लादे रहते हैं, उन बाबू लोगोंको आनन्दीबाईका दृष्टान्त स्मरण रखना चाहिये—उन बाबू लोगोंको इस वृत्तान्तसे कुछ शिक्षा लेना चाहिये !

अमेरिकामें रहनेके समय, एक दिनके लिये भी किसीने किसी बातमें उनकी अज्ञता नहीं पायी; एक दिन के लिये भी किसीको उनको 'अनाड़ी' कहनेका अवसर नहीं मिला । उन्होंने अपनी तीक्ष्ण बुद्धिके बलसे, दोही एक दिनमें विलायती रहन सहनका ढंग सीख लिया । रन्धनके अतिरिक्त, अन्यान्य सब कामोंमें वे श्रीमती कारपेण्टरकी सहायता करने लगीं । बाल्यकालसेही खेलने कूदनेमें उनका मन बहुत लगता था । अतएव केवल एकबार देखकरही उन्होंके विलायती बालक बालिकाओंके खेलकी रीति जान ली । संगीत-विद्यासे भी वे बिल्कुल अपरिचित नहीं थीं । जो लोग उनसे मिलनेको आते थे, उनको ब्रह्मज्ञान और भक्ति विषयक महाराष्ट्रीय संगीत

सुनाकर वे परितृप्त करती थीं। सभी कोई उनका संगीत सुनकर उनकी प्रशंसा करता था। किन्तु उन प्रशंसा-वाक्यों-को सुनकर सरल-हृदया आनन्दीबाई कभी गर्वित नहीं हुईं; और तो क्या, उन्होंने कभी यह भी नहीं प्रकट होने दिया, कि वे इस प्रशंसावादसे प्रसन्न हैं।

कण्ठस्वरकी तरह उनके सौन्दर्य्यने भी अमेरिका-वासियोंको विमोहित कर लिया था। श्रीमती कारपेण्टरने लिखा है—'जब आनन्दीबाई स्वदेशीय वस्त्रोंको पहनकर सज्जित होती हैं, उस समय उनकी लावण्यछटा मेरे नेत्रों में चमकने लगती है। ऐसा जान पड़ता है, कि मानों देव-लोकसे कोई सुरसुन्दरी पृथिवी पर उतर आयी है।' यह बात नहीं थी, कि आनन्दीबाई बहुत रूपवती थीं; कारण यह था, कि उनकी दिव्य ज्योति सबको विस्मित कर देती थी। उनकी भिन्न भिन्न अवस्थाओं के भिन्न भिन्न आलोक-चित्रों (Photographs) के देखने से ऐसा सन्देह होता है, कि अनेक समय उनमें अद्भुत सुन्दरता आ जाती है। वे चित्रोंको बहुत पसन्द करती थीं; इसलिये अमेरिकामें उन्होंने अपने बहुतसे फोटो खिंचवाये थे। परन्तु आश्चर्य्यकी बात है, कि उनके हरेक चित्रमें दूसरे चित्रसे विभिन्नता पायी जाती है। और तो क्या, उनका कोई भी दो फोटो-ग्राफ एक ढंग का नहीं है। एकही समयमें खिंचे हुए उनके दो चित्रों को देखकर, कोई अनजान आदमी यह विश्वास नहीं कर सकता, कि ये चित्र एकही व्यक्तिके हैं! जान पड़ता है, कि अपने इस नित्य परिवर्त्तन होनेवाले सौन्दर्य्य-

के कारणही श्रीमती कारपेण्टरके नेत्रोंको वे देवकन्या प्रतीत हुई थीं। उनका सदा प्रसन्न रहनेवाला चित्त भी इसबातका दूसरा कारण कहा जा सकता है। क्या पढ़नेके समय, क्या गृहस्थी-सम्बन्धी कामोंके करनेके समय, सभी अवस्थामें उनके सदा-प्रफुल्ल-भावको देखकरही शायद, श्रीमती कारपेण्टरने उनका नाम 'आनन्द-निर्झरिणी' रक्खा था। अस्तु।

किन्तु यह देवकन्या-रूपिनी आनन्द-निर्झरिणी भी समय समयपर चिन्ता-समुद्रमें डूबने उतराने लगती थी। भारतवर्षसे डाक आनेके समय जब गोपालरावके पत्रके आनेमें विलम्ब होता था, तो आनन्दीबाईके मुखपर चिन्ता और उदासीनता छा जाती थी। उन्होंने एक पत्रमें गोपाल रावको लिखा था,—"दूसरे कामोंमें लगे रहने परभी, एक बातकी चिन्ता मुझे सदैव सताया करती है। सदा तो मैं आपके ध्यानमें आनन्दपूर्व्वक अपना समय बिताती हूं; परन्तु जब आपसे इतनी दूरपर होनेकी बात याद आती है, तो मैं निराशा-सागरमें गोते खाने लगती हूं। यद्यपि जहांतक मुझसे बनता है, मैं अपने मनके भावके छिपानेकी चेष्टा करती हूं; फिर भी कदाचित् मेरे मुखको देखकर मेरा आन्तरिक दुःख लोग समझ जाते होंगे। पहले मुझको बहुत रुलाई आती थी, और अब भी आती है; किन्तु मैंने आजतक किसीको अपने आँसू देखने नहीं दिये हैं। यद्यपि अब मेरी आँखोंमें जलका आना कम होगया है, तथापि कभी कभी बहुत दुःख होनेसे जीभ और गला सूख जाता है, और हृदयमें कड़ी चोट पहुंचती है। हाय! मैं ठगी

साँसें लेलेकर भी अपने जीका भारीपन कम नहीं कर सकती; क्योंकि यह भय लगा रहता है कि कोई मुझे आँसू बहाते या लंबी सांस खींचते देख न ले।"

पाठक! इस तरह भीतरही भीतर असह्य-दुःख भोगनेपर भी, आनन्दीबाई मिसेज़ कारपेंटरको सदा आनन्द-निर्झरिणी' जान पड़ती थीं,—इससे क्या उनकी बुद्धिमानी और उनके धैर्य्यका पता नहीं लगता है?

जिस समय आनन्दीबाई अमेरिकामें थीं, उस समय भारतवर्षसे कई भलेमानुसोंके लड़के विद्यालाभके लिये वहां गये थे। उन सभोंके विषयमें आनन्दीबाईने भारतवर्षमें अपनी एक बान्धवीको लिखा था,—"विदेशमें आकर भारतवासियोंको क्या करना चाहिये, यह बात इनमेंसे किसीको भी नहीं मालूम। यहां आकर, ये लोग ऐसा समझते हैं, कि मानो स्वर्गमें आगये,—और अनेक प्रकार से अपनी खराबी करने लगते हैं। यद्यपि भारतवर्षसे बहुत कम लोग यहां आते हैं, तथापि उनकी चालचलन देखकर अमेरिकावाले सन्देह करते हैं कि सभी भारतवासी ऐसेही होंगे। इसी कारण, भारतवासियोंको यहां आकर सीधी तरहसे रहना चाहिये। मेरे समयमें जो लोग भारतवर्षसे विद्याशिक्षाके लिये अमेरिकामें आये थे, उनमें दो एक मुझसे भी आकर मिले थे। उनमेंसे एकने मुझे अपने साथ थियेटर दिखानेके लिये ले चलनेका प्रस्ताव किया था। मैंने उनकी बातका घृणा और उपेक्षाके साथ जवाब दिया। उन्होंने शायद यह समझा, कि उनकी तरह सभी लोग

शिक्षालाभके बहाने ऐश मनानेके लिये यहां आते हैं। मुझको इस बातका बहुतही दुःख है, कि ऐसेही मूर्खोंकी चालढाल देखनेसे अमेरिकावालोंकी दृष्टिमें भारतवासियों की मर्य्यादा दिनोंदिन घटती जाती है। इस देशमें आकर भारतवालोंको बहुत सावधान रहना चाहिये और ऐसा कोई काम न करना चाहिये, जिससे भारत-माताकी मर्य्यादामें हानि पहुंचनेकी आशङ्का हो।"

अमेरिका पहुंचनेपर फिलाडेल्फिया और न्यूयार्कके स्कूलोंसे आनन्दीबाईके लिये बुलाहट आयी। फिलाडेल्फियाके ओल्ड-स्कूल नामक विद्यालयमें पढ़ने और पढ़ाने वाली केवल स्त्रियांही हैं—पुरुष नहीं; इस कारण उसी विद्यालयमें जाकर डाक्टरी सीखनेका आनन्दीबाईने निश्चय किया। पहले वहां एक वर्षतक शिक्षालाभ करनेके उपरान्त, न्यूयार्क जाकर होमिओपेथी सीखनेका उनका विचार था; किन्तु पीछे उनको अपना यह विचार तोड़ देना पड़ा। इधर फिलाडेल्फिया स्कूलकी प्रधान अध्यापिका मिसेज़ बडलेकी तरफसे बारंबार उनके लिये बुलाहट आने लगी। मिसेज़ बडलेने आनन्दीबाईको ६।७ डालर वृत्ति देना भी स्वीकार किया। उस कालेजका यह नियम था, कि २० से ३० वर्षकी उमरवाली स्त्रियांही वृत्ति या वजीफा पा सकती थीं। यह नियम जानकर भी आनन्दीबाईने अपनी उमर नहीं छिपायी। उन्होंने मिसेज़ बडलेसे स्पष्ट कह दिया, कि १८ वर्षकी हुए उनको अभी थोड़ेही दिन हुए हैं। फिर भी मिसेज़ बडलेने उनको वृत्ति देनेसे इनकार नहीं

किया। आनन्दीबाई बोष्टन कालेजमें भी बुलायी गयी थीं; किन्तु फिलाडेल्फिया-कालेजके सबसे पुराने तथा प्रसिद्ध होनेके कारण, उन्होंने वहीं जाकर पढ़नेका निश्चय किया। एक बात और भी थी; वह यह—कि फिलाडेल्फियाके कालेजमें सर्जरी या चीरफाड़वाली विद्याके पढ़नेका भी विशेष सुभीता था।

न्यूजर्सीसे फिलाडेल्फिया जानेसे पहले, आनन्दीबाईने अपनी अमेरिकन संगिनियोंको एकदिन मराठी ढंगके भोजमें शामिल किया था। उस दिन डेढ़ दर्जन अमेरिन महिलाओंने मराठी कपड़े लत्तोंसे सजधज, और चेयर, टेबुल, काँटा, चम्मच छोड़कर, ठीक हिन्दू रीतिके अनुसार आनन्दीबाईके यहां भोजन किया था!

सबसे बिदा होकर, १८८३ सालकी २१वीं सितम्बरको आनन्दीबाई श्रीमती कारपेण्टरके साथ फिलाडेल्फियाकी ओर चलीं, और उसी दिन सन्ध्यासमय वहां पहुंच गयीं। दूसरे दिन कालेजवालोंने बड़े समारोहसे उनको अपने यहां भर्ती कर लिया। उस दिन आनन्दीबाईकी अगवानीके लिये वहां प्रायः ५०० स्त्री और पुरुष उपस्थित थे। श्रीमती कारपेण्टरने उस दिनके समारोहका वर्णन करते हुए अपनी डायरीमें लिखा है, कि "उस दिन कपड़ों और गहनोंसे सजी हुई असंख्य स्त्रियां आयी थीं; किन्तु सीधे-सादे स्वभाव और भोलेपनमें कोई भी आनन्दीबाईकी बराबरी नहीं कर सकती थीं।" अस्तु, कालेजके पासही आनन्दीबाईके रहनेके लिये एक मकान किरायेपर लिया

गया। उनको वहां पहुंचाकर, श्रीमती कारपेण्टर दो एक दिनके बाद अपने गांवको लौट आयीं। भारतवर्ष छोड़ते समय आनन्दीबाईके मनमें जैसा दुःख पैदा हुआ था, ठीक वैसाही दुःख श्रीमती कारपेण्टरसे भी बिदा होते समय उनके मनमें उत्पन्न हुआ। मिसेज़ कारपेण्टरके चले जाने के बाद ८।१० दिनतक खाना पीना कुछ भी उनको अच्छा नहीं लगा। आपही सोचिये पाठक, कि जिस श्रीमती कारपेण्टर ने विदेशी स्त्री होकर भी कई मासतक आनन्दी-बाईको अपनी बेटीकी तरह बड़े स्नेह, बड़े आदर और बड़े प्रेमके साथ अपने यहां रखा, उससे जुदा होते समय उनको कैसा दुःख हुआ होगा! अस्तु।

फिलाडेल्फिया जानेके थोड़ेही दिनोंके बाद आनन्दी-बाई बीमार पड़ीं। वे प्रतिदिन १०।११ घण्टे पढ़ा करती थीं! इसके सिवा, घरका काम काज भी अकेले उन्हींको करना पड़ता था। उनके मकानमें ठण्डक बहुत थी; अतएव आग भी वहां बहुत देरमें जलती थी। इस कारण, किसी दिन अनाहारही—और किसी किसी दिन अधपके भोजनसेही सन्तुष्ट होकर उनको कालेजमें जाना पड़ता था। इन्हीं कारणोंसे थोड़ेही दिनोंमें बीमारीने उनको आ घेरा। अमेरिकाका जलवायु और वहांकी सर्दी गर्मी इतनी जल्दी जल्दी बदला करती है, कि सदा सावधान न रहनेसे भला-चंगा आदमी भी रोगी हो जाता है। वहां एकएक दिनमें गर्मीकी अधिकताके कारण, ४।५ सौ मनुष्यतक मर जाते हैं! उसके बादही बेहद ठण्डी हवा भी सैकड़ोंकी जान

लेलेती है! ऐसी अवस्थामें आनन्दीबाईका बीमार पड़ जाना कोई विचित्र बात नहीं है।

फेब्रुअरी मासके अरम्भमें आनन्दीबाई 'डिपथीरिया' रोगसे पीड़ित हुईं। गलेमें फोड़ोंके निकल आनेसे उनको बहुत कष्ट मालूम होने लगा। ऊपरसे बुखार और शिरके दर्दने उनको और भी सताना आरम्भ किया। अतएव दो एक दिनमेंही वे बहुत दुबली हो गयीं। यहांतक, कि उनको अपने बचनेकी भी आशा न रही! किन्तु साथमें पढ़नेवाली स्त्रियोंकी बहुत सेवा शुश्रूषासे वे धीरे धीरे—बहुतकष्ट पानेके उपरान्त—अच्छी हुईं। इसी बीचमें गोपालराव और श्रीमती कारपेंटरने उनके पास जो धैर्य्य धरानेवाले पत्र भेजे थे, उनसे आनन्दीबाईका मानसिक कष्ट कई अंशोंमें घट गया था।

बीमारीके सिवा, और और तरहसे भी फिलाडेल्फियामें आनन्दीबाईको कष्ट उठाना पड़ा। डिपथीरिया रोगसे आराम हो जानेके बाद, वे बहुत कमजोर हो गयी थीं; अतएव उस समय उनको स्कूलके बोरडिंग हाउसमें जाकर कच्चा अन्न खाना पड़ा था। इन्हीं कारणोंसे उनका शरीर शीघ्र रोग-रहित नहीं हो सका। आनन्दीबाई शारीरिक कष्ट तो भोगतीही थीं,—किन्तु ऊपरसे मिस बडूलेने उनको और भी दुःख दिया। उनको खृष्ट धर्म्ममें दीक्षित करनेके लिये उन्होंने अनेक उद्योग किये; परन्तु जब वे सफल-मनोरथ नहीं हुईं, तब नाना प्रकारसे आनन्दीबाई पर क्रोध और रोष प्रकट करने लगीं। इन्हीं

मिस बडलेके कारण, कभी कभी आनन्दीबाईको दिनभर निराहार भी रहजाना पड़ता था!

यह सब कष्ट सहकर भी आनन्दीबाई डाक्टरी विद्या सीखनेके लिये जीजानसे परिश्रम कर रही थीं। इसी समय भारतवर्षसे किसी दुष्टने उनको एक ऐसा पत्र लिखा, कि दुःखित होकर उन्होंने दश दिनतक उपवास कर डाला! अन्तमें एक दिन स्वप्नमें उन्होंने एक दिव्यरूपधारिणी स्त्री को यह कहते हुए देखा, कि,—"बेटी, इस पत्रके लिये दुःखित न हो।" तब वे फिर पहलेकी तरह निश्चिन्त हो कर रहने और खाने पीने लगीं।

इन सब पापोंसे छुटककारा पाते न पाते गोपालराव उनपर क्रुद्ध हुए! पहले आनन्दीबाई गोपालरावको हर सप्ताहमें एक लम्बा चौड़ा पत्र लिखा करती थीं; किन्तु फिलाडेल्फियामें जानेके पश्चात्, बहुत कम अवकाश मिलनेके कारण, प्रायः पत्र लिखनेमें देर होने लगी। इसके सिवा, कभी तो गोपालराव हर सप्ताह केवल एक कार्ड भेज देने के लिये उनसे कहते, और कभी लिखते, कि "महीनेमें चार बार छोटे छोटे पत्र न लिख कर, एक बार बड़ा पत्र लिखा करो।" इस प्रकार रह रह कर गोपालरावके अपना विचार बदलनेके कारण, आनन्दीबाई यह निश्चय न कर सकीं, कि वे क्योंकर सन्तुष्ट होंगे। इसीसे पत्र भेजनेमें गड़बड़ी होने लगी। यह गड़बड़ देखकर गोपालराव ने पहले तो यह समझा, कि आनन्दीबाई बहुत सुस्त हो गयी हैं! परन्तु पीछे उन्होंने यह अनुमान किया, कि आलस्यवश नहीं

किन्तु अहङ्कारवश वे पत्र लिखनेमें लापरवाई करती हैं। इसके अतिरिक्त, आनन्दीबाईने बिना उनसे पूछे गुजराती ढंगके कपड़े पहनना आरम्भ कर दिया था; इससे भी गोपालराव उनसे बहुत नाराज होगये! परन्तु पाठक! इस विषयमें आनन्दीबाईको उनसे अनुमति लेनेकी क्या अवश्यकता थी? जब गोपालराव स्वयं उनसे कह चुके थे कि यदि प्रयोजन हो तो तुम अंगेरेजी चालके कपड़े भी पहन सकती हो, तब इस समय गोपालरावका रुष्ट होना ठीक नहीं था। कदाचित् इसका यह कारण हो, कि इस समय गोपालरावको अपनी कही हुई बात याद न रही हो। अस्तु। १८८४ ईस्वीकी छठीं जनवरीको उन्होंने आनन्दीबाईको एकपत्रमें 'गर्विता' लिखा। इतनाही नहीं; किन्तु दूसरे पत्रमें उनको 'विश्वासघातिनी' कहनेमें भी वे नहीं चूके! परन्तु स्वयं गोपालरावकी बातोंसे मालूम होता है, कि उन्होंने आनन्दीबाईकी कोई कुचरित्रता देखकर उनको 'गर्विता' या 'विश्वासघातिनी' नहीं लिखा; किन्तु यह समझकर लिखा, कि अब पढ़ने लिखनेमें उनका जी नहीं लगता। जो हो, पतिके इन पत्रोंको पढ़कर आनन्दीबाई बहुतही दुःखित हुईं। उन्होंने पत्रोंका उत्तर लिखकर उनसे क्षमा मांगी। पीछे वही गोपालराव, जिन्होंने उनको 'गर्विता' और 'विश्वासघातिनी' लिखा था, उनसे ऐसे प्रसन्न हुए, कि उनको 'सरस्वती' कहकर सम्बोधन करने लगे! जिन लोगोंका चित्त ठिकाने नहीं रहता, उनकी ऐसीही दशा रहती है। ऐसे लोग एकही क्षणमें रुष्ट और

दूसरेही क्षणमें सन्तुष्ट होजाते हैं!

आरम्भहीमें कहा जा चुका है, कि बचपनहीसे आनन्दीबाईको फुलवारीका बहुत शौक था। परन्तु विदेशमें आकर अबतक फुलवारी-सम्बन्धी कोई काम करनेका उनको अवसर नहीं मिला था। फिलाडेल्फियामें आकर उन्होंने इस ओर भी ध्यान दिया। कालेजमें डाक्टरीका अभ्यास करनेके बाद उनको जो थोड़ा बहुत समय मिलता था, वह समय वे उद्भिद्-विद्या (Botany) के अभ्यासमें बिताती थीं। तरह तरहके फूलोंको लेकर वैज्ञानिक रीतिसे उनकी परीक्षा करनेमें आनन्दीबाईका बहुत समय बीतता था। उन्होंने जर्म्मन और फराँसीसी भाषाकी चर्चा भी आरम्भ की थी; किन्तु समयके अभावसे, अन्तमें उनको यह उद्योग छोड़ देना पड़ा। संस्कृत-साहित्यके साथ उनका जो प्रम था, वह प्रेम विदेशमें जाकर भी नहीं छूटा। समय समय पर गोपालराव संस्कृतकी पुस्तकें भारतवर्षसे खरीद कर उनके पास भेज दिया करते थे।

एक पत्रमें आनन्दीबाईने एकबार भारतवर्षसे श्रीमती कारपेण्टरको लिखा था, कि "भारतवर्षके विषयमें अमेरिकावाले कुछ नहीं जानते। अमेरिकावालोंको हिन्दू शास्त्र और हिन्दू-आचार व्यवहारका मर्म्म समझानेके लिये मैं संस्कृत पढ़ रही हूं।" फिलाडेल्फियामें जाकर आनन्दीबाईने अपनी यह प्रतिज्ञा पूरी की। भारतवर्षसे लौटी हुई पादरिनें, वहां जाकर, हिन्दुओंके विषयमें मनमानी बातें कहती हैं;—आनन्दीबाईने उनका खण्डन

किया। एकबार एक स्त्रीसभामें हिन्दू-बाल्यविवाहके सम्बन्धमें किसी पादरनने वक्तृता दी थी; आनन्दीबाईने उसका प्रतिवादकर १० डालर इनाम पाया था। उस दिन उस सभामें प्रायः २००० स्त्रियां उपस्थित थीं। "हिन्दू" रमणीके सम्बन्धमें भी एकबार वक्तृता देकर, उन्हेंाने अमेरिकावालोंकी आँखोंपर पड़े हुए पर्देको हटा दिया था। उनका लेक्चर सुननेके लिये लोग बहुत उत्सुक रहा करते थे; किन्तु समयके अभावसे, सभा समाजसे आये हुए निमन्त्रणको वे प्रायः लैाटा देती थीं। तैाभी, किस प्रकार अमेरिका-वासियोंकी आंखोंमें भारतवर्षका गैारव बढ़ेगा; किस तरह अमेरिकावालोंको इस बातका निश्चय हो जायगा, कि भारतवासी प्रतिष्ठा अैार मानके योग्य हैं—किस भांति वे जानेंगे, कि हिन्दू रीति नीति अनुकरणीय है;—इस बातकी चिन्ता, इस बातके लिये उद्योग, वे सदैव किया करती थीं। आपही बताइये पाठक! आजकल हमारे भारतवर्षमें आनन्दीबाईकी तरह कितने देशहितैषी पुरुष अथवा स्त्रियाँ वर्त्तमान हैं?

पांचवां परिच्छेद ।

फिलाडेलफियामें कुछ दिन रहनेके बाद गोपालरावके बिना आनन्दीबाईका जी बहुत घबराने लगा; अतएव एक पत्रमें उन्होंने पतिको अमेरिकामें आनेके लिये लिखा। उस पत्रके एक अंशका मतलब यह है,—"आपसे जुदा हुए आज ठीक एक साल, दो महीने, बीस दिन हुए अब आपके बिना मेरा जी बहुत घबराता है............. जिस तरह बने, आप यहां आनेकी चेष्टा करें; क्योंकि अब अधिक दिनोंतक आपकी जुदाईका दुःख मैं नहीं उठा सकूंगी। यदि राहखर्चके लिये आपके पास रुपये न हों, तो मैं अपने गहने भेज सकती हूं। आप उन सबको बेचकर रुपये इकट्ठा कर सकते हैं। अथवा यदि आपकी आज्ञा हो, तो मैं यहीं उनको बेचकर रुपये भेज दूं।" दुर्भाग्यकी बात है, कि आनन्दीबाईका ऐसा पत्र पानेके बाद भी गोपालरावने एक सामान्य बातपर उनसे विरक्त होकर उनको 'गर्विता' और 'विश्वासघातिनी' आदि लिखा था!

गोपालराव भी अमेरिका जानेके लिये उत्सुक थे। जबसे आनन्दीबाई भारतवर्ष छोड़कर गयी थीं, तभीसे अनेक कारणोंसे स्वदेश और स्वसमाजसे उनको चिढ़ हो गयी थी! यहांतक, कि भारतवर्षको एकबारही परित्याग कर सदाके लिये अमेरिकामें जाकर रहनेका उन्होंने संकल्प किया था! इस विषयमें उनके मनका भाव समझकर, आनन्दीबाईने उनको जो पत्र लिखा था, उसका कुछ अंश आगे लिखा जाता है,—

"आपका भाव बदलता देखकर मुझे बहुत दुःख हुआ है। आपने लिखा है, 'हिन्दुओंसे मुझे घृणा होगयी है!' भले बुरे सभी समाज और सभी देशमें होते हैं। मैं नहीं जानती, कि हिन्दुओंके सम्बन्धमें आपका मत क्यों बदला.................मैं स्वदेश-त्यागकी पक्षपातिनी नहीं हूं। यद्यपि यहां सभी लोग मुझसे स्नेह करते हैं; और तो क्या—धोबी भी थोड़े खर्चमें कपड़े धो लाता है; किसी प्रकारका कष्ट नहीं है; तोभी मेरे द्वारा यदि किसी देशका उपकार हो सकता हो, तो वह भारतवर्षहीका हो, यही मेरी एकमात्र कामना रहती है। भारतवर्षमें स्त्रियोंकी चिकित्सा-विद्या-शिक्षाके लिये एक कालेज खोलवाना मेरा प्रधान उद्देश्य है। इस बातके लिये अपने समय और अपनी शक्तिका व्यय करना मैं अपना कर्त्तव्य समझती हूं। परन्तु यदि यह बात ईश्वरको स्वीकार न हो, तो मैं इतना उद्योग यथासम्भव अवश्य करूंगी, कि भारतवर्षकी स्त्रियों-को स्वास्थ्यरक्षाके नियमादिके जाननेका सुभीता होजाय। पृथिवीके किसी देशको मैं घृणा-दृष्टिसे नहीं देखती। किन्तु भारतवर्षमें इस बातका अधिक अभाव है और वहांकी रमणियोंकी रीति नीति और स्वभावके विषयमें मैं अधिक जानती हूं,—इसलिये मेरेद्वारा भारतकोही विशेष सहा-यता मिल सकती है और भारतकीही सहायता करना मुझे उचित है...............आप यदि अमेरिकामें आकर जन्मभर यहीं रहनेका विचार न बदलेंगे, तो मैं अवश्य अपने देशको लौट जाऊंगी। मैं नहीं जानती, कि तब

अकेले आपको यहां क्या सुख मिलेगा! (नहीं नहीं, मैं कैसी पागलों जैसी बातें कहती हूं! मेरे बिना आपके सुख में कमी क्यों होगी?) एकबार यहां आकर यदि फिर स्वदेशको लौट जानेकी आपकी इच्छा न हो, तो फिर यहां आपके आनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। मुझसे जिस तरह बनेगा, मैं कष्ट उठाकर चार वर्षतक यहां रहूंगी। अभीतक मेरे धैर्य्यमें कमी नहीं हुई है। आप मेरे लिये किसी प्रकारकी चिन्ता न करें।

"अच्छा मैं यह पूछती हूं, कि इस देशमें जन्मभर रहकर आप अपने देशके लोगोंको क्या शिक्षा देंगे? स्वार्थ-परताही या और कुछ? आप तो स्वार्थपरतासे बहुत घृणा करते हैं—"

एक दूसरे पत्रमें आनन्दीबाईने लिखा था, "आपके पत्रमें यह पढ़कर, कि 'हिन्दू-रीति नीति और आचार व्यवहार से रहकर हमलोगोंको संस्कार और उन्नति करना चाहिये' मैं बहुतही आनन्दित हुई। यह नीति बहुत उत्कृष्ट और प्रशंसनीय है...........हमलोगोंके कालेजमें एक स्त्री घोर नास्तिक थी। अनेक पादरिनें बहुत उपदेश करके भी उसे आस्तिक न बना सकीं; किन्तु मेरे साथ केवल तीन दिनके धर्म्म-विषयक तर्कवितर्कमेंही उसने ईश्वरपर विश्वास करना आरम्भ कर दिया है...........हिन्दुस्थानी स्त्रियोंकी अपेक्षा इस देशकी स्त्रियां स्त्रीरोगसे अधिक पीड़ित होती हैं। हमलोग (हिन्दुस्थानी स्त्रियां) कितनी ही अशिक्षिता और असभ्य क्यों न हों,—किन्तु धर्म्ममें,

सहनशीलतामें और नीतिमें इस देशकी स्त्रियोंसे बहुत श्रेष्ठ हैं। संसार भरकी स्त्रियोंको हिन्दू रमणियोंके इन गुणोंका अनुकरण करना उचित है......आपको इस बातका भय है, कि मैं खृष्टान हो जाऊंगी; किन्तु सुन रखिये, कि आनन्दीबाई—रमाबाई नहीं है! विश्वासके विरुद्ध काम करनेकी अपेक्षा वह मर जाना अच्छा समझती है। रमाबाईमें अनेक गुण हैं, इसमें सन्देह नहीं; किन्तु मेरी यह प्रतिज्ञा है,—कि 'जो हठ राखै धर्म्मकी, तेहिं रक्खै करतार।' मुझे यह लिखकर व्यर्थ कष्ट न दीजिये, कि मैं खृष्टान हो जाऊंगी।"

आनन्दीबाईका पत्र पाकर गोपालरावने सदैवके लिये अमेरिकामें आकर रहनेका विचार तोड़ दिया। परन्तु उस समय वे अपनी सहधर्म्मिणीसे मुलाकात करने के लिये भी अमेरिका नहीं जा सके। कारण यह, कि उस समय उनके पास रुपयेकी कमी थी। एक पत्रमें देशहितैषिणी आनन्दीबाईने उनको लिखा था,—"यहां आते समय आप भारतवर्षकी बनी हुई कुछ वस्तुओंका नमूना लेते आइयेगा। हमलोग यहांके व्यापारियोंको उसे दिखलाकर इस बातकी परीक्षा करेंगे, कि यदि उन वस्तुओंका व्यापार अमेरिकाके साथ किया जाय, तो उससे कितना लाभ हो सकता है।" गोपालरावने उनका पत्र पाकर इस विषयमें अपने मित्रोंसे सलाह की और उनसे व्यापारमें सहायताके लिये कुछ रुपयेकी भी प्रार्थना की; किन्तु खेद-का विषय है, कि किसीने उनकी प्रार्थना पर विशेष ध्यान

नहींदिया। जब इस बातकी खबर आनन्दीबाईको लगी, तो उन्होंने उनको लिखा, कि "अबसे आप मेरे खर्चके लिये केवल ५०) रु. मासिक भेजा करें। मनिआर्डरके खर्चके सहित ५०) रु. मासिकसे अधिक भेजनेकी कोई आवश्यकता नहीं है। इसके सिवा, खर्चसे जोकुछ बचा करे, उसे बङ्कमें जमा कर दिया करें। ऐसा करनेसे कुछ दिनोंमें आपके पास अमेरिका आनेके खर्चके योग्य रुपया इकट्ठा हो जायगा। आगे देखा जायगा।.........मेरे लिये जूते अथवा कपड़े भेजनेकी भी अब कोई आवश्यकता नहीं है। हां, यदि आपकी अवश्यही कुछ भेजनेकी इच्छा हो, तो केवल एक देशी 'पिन' किसी सुनारसे बनवाकर भेज दीजियेगा; अँगरेजी दूकानसे उसे कदापि मत खरीदियेगा; विलायती चीजें मुझे बिल्कुल नहीं जँचतीं।"

आनन्दीबाईके चित्तकी दृढ़ता, उनकी स्वदेशप्रीति, उनकी स्वधर्म्मनिष्ठा आदि अनेक सद्‌गुणोंको देखकर अमेरिकाके एपिस्कोपेलियन सम्प्रदायके एक पादरीने उनके विषयमें अपने शिष्योंसे कहा था, कि "मिज़ सेजोशी जिस प्रकार पहले पहल अमेरिकामें आकर रही थीं, ठीक उसी तरह आज भी वे रहती हैं। उनका आचार-व्यवहार यहां आकर जरा भी नहीं बदला है। किन्तु यदि वे इसी तरह अपना काम करके अपने देशको लौट जायँगी, तो हमलोगोंके और खृष्टधर्म्मके पक्षमें यह एक बड़ी लज्जाकी बात होगी।"

अमेरिकन समाचारपत्रोंके संवाददाताओंने आन-

न्दीबाईको बहुत दिक कर रखा था। वे जहां कहीं जाती थीं, वहीं वे सब उनका पीछा करते थे। उनमें अनेक ऐसे भी थे, जो उनसे मिलकर तरह तरहके प्रश्न किया करते थे। किन्तु आनन्दीबाई अपनी प्रशंसाकी भूखी नहीं थीं; इस लिये वे संक्षेपमें उनकी बातोंका जवाब देकर उनको बिदा करदेती थीं। तथापि अनेक पत्रोंमें उनकी प्रशंसा प्रकाशित हुई थी। एकबार गोपालरावने उनकी चिट्ठपत्री और उन के विषयकी पत्र-सम्पादकोंकी लिखी हुई सम्मतियोंको एकत्रित करके पुस्तकाकारमें छपाना चाहा था, किन्तु सीधी-सादी आनन्दीबाईने ऐसा करनेसे उनको रोक दिया।

हर साल गर्मीकी ऋतुमें आनन्दीबाई मिसेज़ कारपेण्टरसे मिलनेके लिये 'रोशेल' गांवको जाया करती थीं। कभी कभी अपने साथ पढ़नेवाली औरतोंके बहुत अनुरोध करनेपर वे उनके यहां भी हो आती थीं। इस प्रकार वाशिंगटन्, बोष्टन आदि कई नगर उनके देखनेमें आये। बहुत दिनोंतक वे अमेरिकामें रहीं, किन्तु एकबारके सिवा कभी भी वे वहां थियेटर देखने नहीं गयीं। उसबार भी साथावलियोंके बहुत जोर जबर्दस्ती करनेपर उनको उनका साथ देना पड़ा। जिस प्रकार ज्ञानलाभके लिये वे तपस्विनीकी तरह अमेरिका गयी थीं, उसी प्रकार वे सीधीसादी तरहसे वहां रहकर घर लौटीं। एक पत्रमें उन्होंने लिखा था,—"यदि मैं यह न सोचे होती, कि भारतवासियोंके उपकारके लिये कुछ करना मेरा कर्त्तव्य है, तो मैं कदापि इतनी दूर न आती......भारतमें लौटकर वहां हिन्दू महि-

लाओंके लिये एक डाक्टरी-कालेज स्थापन करनाही मेरे जीवनका प्रधान लक्ष्य है।" पाठक! इस दृढ़ विचारको आनन्दीबाईने अन्त समयतक नहीं तोड़ा; किन्तु ईश्वरको यह बात स्वीकार नहीं थी!

आनन्दीबाईको अपने कर्त्तव्यका कितना ज्ञान था, इसका पता नीचे उद्धृत किये हुए पत्रसे स्पष्ट लग जायगा। उन्होंने लिखा था,—"इस संसारमें सभीका कुछ न कुछ कर्त्तव्य है, और उस कर्त्तव्यका पालन करना भी हरेकके लिये आवश्यक है। यदि स्वर्गमें केवल सुखही सुख हो—वहां केवल आरामहीकी चीजें एकत्रित हों और किसी प्रकारका कर्त्तव्य न हो, तो मैं उस स्वर्गसे दूर रहना ही अच्छा समझती हूं। कारण यह, कि कर्त्तव्यका सम्पादन करनेके बाद जो सुख प्राप्त होता है वही सुख अटल सुख है; बाकी सब प्रकारके सुख क्षणिक हैं।" यह पत्र आनन्दीबाईने १८८६ ई० की १२ वीं फरवरीको श्रीमती कारपेण्टरको लिखा था।

१८८३ ईसवीकी वसन्त ऋतुमें "मारिसन हास्पिटल्" नामक एक पागलखाना देखनेके लिये जाकर आनन्दीबाईको बहुत कष्ट उठाना पड़ा था। वहां एक पगली सहसा उनपर आक्रमण कर बैठी। उस पगलीसे सभीको भय मालूम होता था। उस समय उसके पास टेबुलपर कई तेज छूरियां पड़ी थीं! पागलखानेकी रक्षा करनेवालीने यह दशा देखकर आनन्दीबाईको वहांसे भागनेका इशारा किया; किन्तु निडर आनन्दीबाई उस समय जरा भी

विचलित नहीं हुई। यदि वे भागनेकी चेष्टा करतीं तो पगली अवश्यही उनको घायल कर देती; परन्तु आनन्दीबाईने बड़ी धीरता और गम्भीरताके साथ उस भयानक विपद्से अपना बचाव करलिया। वे धीरे धीरे उसीकी ओर देखती हुई पीछे हट रही थीं, कि इतने में दूसरी ओर से आकर पागलखानेकी रक्षा करनेवालीने पगलीके हाथसे छुरी छीन ली।

* * * * * *

इधर बहुत दिनोंसे गोपालराव सैर सपाटेके लिये घरसे बाहर निकलनेकी इच्छा कर रहे थे। आनन्दीबाईसे मिलनेके लिये भी वे व्याकुल थे। अन्तमें, १८८४ ई० में छः महीनेकी छुट्टी लेकर वे अमेरिकाकी ओर रवाना हुए। इससे कुछ दिन पहले कलकत्तेके पोष्टमाष्टरने आनन्दीबाई की सहायताके लिये १४०) रु० उनको दिये थे। इसलिये यह सोचकर कि इतने रुपयेसे कुछ दिनतक आनन्दीबाईका काम चल जायगा, उन्होंने भिन्न भिन्न देशोंकी सैर करना आरम्भ किया। उन्होंने कई उपाय सोचकर यह निश्चय करलिया था, कि इस सैरमें भारतवर्षकी एक कौड़ी भी खर्च न की जाय। सो सन्यासीका वेष बनाकर स्थान स्थान पर वक्तृताके द्वारा वे रुपया इकट्ठा करते जाते थे!

गोपालराव पहले ब्रह्मदेश—फिर श्याम, चीन, जापान आदि कई स्थानोंमें घूमते हुए अमेरिका पहुंचे। चीनमें जाकर वे बहुत बीमार होगये। उस समय जब बहुतसी औषधियां सेवन करके भी वे अच्छे नहीं हुए, तब

एक दिन बहुत घबराकर उन्होंने मिट्टीके तेल और चीनी का शर्बत बनाकर पी लिया! ऐसा करनेके कारण वे बहुत कष्टित हुए। फिर आराम होनेके बाद अनेक देशोंकी सैर करते और भारतकी श्रेष्ठता तथा दूसरे देशोंकी रीति-नीतिकी निन्दा विषयक वक्तृताएं देते हुए थोड़े दिनोंमें वे अमेरिका पहुंच गये!

आनन्दीबाई स्वामीके आनेका समाचार सुनकर बहुत प्रसन्न हुईं। किस तरह पतिकी अगवानी करना चाहिये, यह बात वे सोचने लगीं और इस विषयमें उन्होंने गोपालरावको एक पत्र भी लिखा। उन्होंने उनके लिये अमेरिकाके किसी कालेजमें नौकरीका भी बन्दोबस्त कर रखा था। किन्तु विचित्र प्रकृति गोपालरावको ये सब बातें अच्छी नहीं मालूम हुईं। उन्होंने उनके पत्रका भी कुछ दूसराही मतलब समझा और उसके जवाबमें बहुत बुरी और कड़ी बातें लिखीं। इस बातसे आनन्दीबाईने भी कुछ नाराज होकर उनको एक अभिमान-पूर्ण पत्र लिखा; किन्तु गोपालरावने उस पत्रका उत्तर नहीं दिया।

इसके बाद, गोपालराव, अमेरिकाके अनेक स्थानोंमें घूम घूमकर 'लेक्चर' देने लगे। बेचारी आनन्दीबाई उनसे मिलनेके लिये जितनीही घबराहट दिखलाती थीं, उतनी ही गोपालराव इस विषयमें लापरवाई करते थे। और तो क्या, एकबार उन्होंने आनन्दीबाईको लिखा, कि जब तक तुम्हारी परीक्षा समाप्त न होगी, तबतक मैं तुमसे नहीं मिलूंगा!

एकदिन आनन्दीबाई श्रीमती कारपेण्टरकी कन्या 'एमिर' के साथ किसी बान्धवीके घर गयी थीं। जब वे लौटकर आयीं, तो उन्होंने अपने मकानमें टेबुलके पास गोपालरावको बैठे पुस्तक पढ़ते देखा! गोपालरावने उनको पत्र लिखकर अपने आनेकी सूचना नहीं दी थी। अतएव बहुत दिनोंकी व्याकुलताके बाद हठात् स्वामीको पाकर आनन्दीबाईको कितना हर्ष हुआ होगा, इस बातका अन्दाजा पाठकगण स्वयं करलें।

बहुत दिनोंतक विदेशमें रहने और तरह तरहके कष्ट भोगनेके कारण गोपालरावका स्वास्थ्य बिगड़ गया था। आनन्दीबाईके उद्योगसे वे बहुत शीघ्र अच्छे होगये। इसके बाद दोनोंने एकसाथ रहकर बड़े आरामके साथ ४ महीने व्यतीत किये। उस समय गोपालरावने ऐसा विचार किया, कि जबतक स्त्रीकी शिक्षा समाप्त न होले, तबतक भारतवर्षमें न लौटकर अमेरिकामेंही रहना चाहिये। पश्चिमी देशोंमें वक्तृताके द्वारा बहुतकुछ रुपया पैदा किया जासकता है। गोपालरावमें वक्तृता करनेकी शक्ति थी। अतएव उन्होंने इसी रोजगारसे अपना लाभ करना निश्चय किया। आनन्दीबाईने कहा,—'दुष्ट पादरी दूसरे देशोंकी बुराई करना बहुत पसन्द करते हैं। ऐसी अवस्थामें यदि आप भारतवर्षकी रीत नीतिकी श्रेष्ठताके विषयमें लेक्चर देदेकर यहांवलोंका भ्रम दूर करनेकी चेष्टा करें, तो बहुत उत्तम बात हो।' गोपालरावने यह प्रस्ताव स्वीकार किया। एक तो वे स्वयं परछिद्रान्वेषी थे; तिसपर स्त्रीके अनुरोध

और स्वदेशभक्तिके जोशमें जब उन्होंने वक्तृता करना आरम्भ किया, तो उनकी वक्तृताका बहुतोंपर असर पड़ने लगा। इसी प्रकार अमेरिकाके भिन्न भिन्न नगरोंमें वक्तृता करते हुए वे घूमने लगे। इधर आनन्दीबाईने अपनी पढ़ाईकी ओर ध्यान दिया।

अमेरिकामें कुहरा अधिक गिरता है; इस कारण आते जाते हुए कभी कभी लोग पैर फिसलनेसे गिर पड़ते और लोगोंके उपहासभाजन बनते हैं। आनन्दीबाई तीन वर्षतक अमेरिकामें रही थीं। किन्तु इतने दिनोंमें एकबार के सिवा कभी उनका पैर रास्तेमें नहीं फिसला था। एकबार जब वे फिसलकर गिरी थीं, तो उनके दोनों हाथोंकी सब चूड़ियाँ टूट गयी थीं। फिर जबतक उनको नयी चूड़ियाँ नहीं मिलीं, तबतक उन्होंने अन्नजल नहीं छुआ। गोपाल-राव उस समय अमेरिकामेंही थे। उन्होंने शीघ्रही अपनी प्रियतमाके लिये सोनेकी चूड़ियाँ बनवा दीं। इस घटनाके विषयमें आनन्दीबाईने श्रीमती कारपेण्टरको लिखा था—"मैंने सोनेकी चूड़ियाँ पायी हैं! प्रत्येक वार रास्तेमें गिरने से यदि इतना सोना मिले, तो क्या इस गिरनेको 'दुर्घटना' कहा जायगा? तथापि मैं इसे दुर्घटनाही समझती हूं; कारण यह, कि यदि ऐसी दुर्घटना न होती, तो इतने मूल्य में कोई आवश्यक अस्त्र या प्रयोजनीय पुस्तक खरीदी जा सकती थी।"

जब गोपालराव वक्तृताके द्वारा धन उपार्जन करनेके लिये चले गये, तो आनन्दीबाई पुनः डाक्टरी विद्या सीखने

में विशेष परिश्रम करने लगीं। ज्यों ज्यों परीक्षाके दिन निकट आने लगे, त्योंही त्यों वे अधिक मेहनत करने लगीं। इससे उनका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। सन् १८८६ ईस्वीके फरवरी महीनेमें फिर एकबार डिप्थीरिया रोगके लक्षण दिखाई दिये। ईश्वरकी कृपासे उस समय तो वे सहजमें अच्छी हो गयीं; किन्तु रोग एकदम उनके शरीरसे दूर नहीं हुआ। इससे पहले बड़े दिनकी छुट्टियोंमें रोशल में 'हिन्दू-धात्री-विद्या' विषयक एक ५० पृष्ठका लेख (अंगरेजीमें) उन्होंने लिखा था। उनकी इच्छा थी, कि यह पुस्तक १०० पृष्ठोंमें समाप्त हो; किन्तु समयके अभावसे वे उसे सम्पूर्ण न कर सकीं।

ठीक समयपर परीक्षा देकर आनन्दीबाई उत्तीर्ण हुईं। १८८६ ई० के मार्च मासकी ११ वीं तारीखको फिलाडेल्फिया कालेजके अध्यक्ष, अध्यापकों और वहांके दूसरे बहुतसे लोगोंने मिलकर बड़े समारोहके साथ उनको एम० डी० उपाधि प्रदान की। उनके सर्टीफिकेट्में नीचे लिखी बात लिखी थी,—

To all and every one who will read these presents

GREETINGS.

Let it be known that we, the president and Professors of the *Medical College of Pennsylvania* founded for the purpose of instructing women in the art of medicine by this

parchment certify that *Anandibai Joshi* of the East Indies has devoted herself amongst us to all those studies which rightly and legiti mately pertain to the DEGREE OF DOCTOR OF MEDICINE and we have made and constituted her after being approved by Examination held before the Professors a *Doctor* in the art of healing and we have given and granted to her all the *rights*, *immunities*, and *privileges* pertaining to that degree both here and elsewhere.

In further confirmation of which let this diploma attested with our Common Seal and subscribed with our Signatures be a witness.

Given in the Hall of the College of Philadelphia on the 11th March 1886.

RACHEL L BODLEY M D, *Prof Chemistry and Toxicology.*

CLARA MARSHALL M D, *Prof Materia Medica and Gen'l Therapeutics*

FRANCIS EMILY WHITE M D, *Prof of Physiology and Hygiene*

ANNA BROOMALL M D, *Prof of Obstetrics.*

JAMES B WALKER M D, P H D, *Practice Medicine.*

HANNAH T CROASDALE M D, *Prof of Legnorcology and Dis Child*

WM H PARISH M D, *Prof of Anatomy*

T. MORRIS PEROT, *President* C N PEIRCE, *Secy.*

ENOCH LEWIS, *Treasurer*

अमेरिकामें डाक्टरीके अनेक विद्यालय हैं; किन्तु उनमें फिलाडेल्फिया-कालेजही सबसे श्रेष्ठ समझा जाता है। इस कालेजसे परीक्षा पासकर सर्टीफिकेट् प्राप्त करनेके लिये रूस, जर्म्मन, फ्रान्स—और तो क्या, इंग्लैण्ड तककी स्त्रियां अमेरिकामें जाती हैं। एक हिन्दू औरत होकर आनन्दीबाईका इस विद्यालयकी परीक्षामें उत्तीर्ण होकर प्रशंसा-पत्र पाना सामान्य गौरवकी बात नहीं है। इस उत्सवमें पधारनेके लिये कालेजवालोंकी ओरसे पण्डिता रमाबाई इंग्लैण्डसे बुलायी गयी थीं। उपाधि प्राप्त करनेके समय आनन्दीबाईने अपनी अनेक साथवालियोंकी ओरसे भेंट पुरस्कार और स्मारकचिन्हादि भी पाया था। इसी अवसर पर वहांकी किसी धनवती स्त्रीने उनको एक सोनेकी बढ़िया घड़ी उपहार-स्वरूप दी थी। इसके बाद वन-भोजन आदि अनेक आनन्द देनेवाली बातोंमें दो तीन सप्ताह खुशी खुशी बीत गये॥

छठां परिच्छेद ।

पहलेहीसे आनन्दीबाईका स्वास्थ्य बिगड़ा हुआ था। परीक्षा देनेके समयमेंही वे बहुत दुर्बल होगयी थीं। जब उन्होंने परीक्षामें उत्तीर्ण होकर सर्टीफिकेट् प्राप्त किया, तो उसके थोड़ेही दिनोंके बाद पण्डिता रमाबाईकी कन्या मनोरमा बहुत बीमार हुई। उस समय कई रातोंतक जाग कर आनन्दीबाईने उसकी सेवा शुश्रूषा की; इससे उनका स्वास्थ्य और भी बिगड़ गया। अतएव यह समझकर, कि यह अस्वस्थता अधिक परिश्रम करनेके कारण हुई है, उन्हों-ने अपने स्वामीके सहित रोशेल नगरमें जाकर कुछ दिनों तक निवास करनेका निश्चय किया। वहां कुछ दिन रहकर स्वस्थ होते न होते न्यू-इंगलैण्डके क्लाक हास्पिटल्में चि-कित्सा-शास्त्र-सम्बन्धी कुछ बातोंका अभ्यास करनेके लिये उनको जाना पड़ा। वहां बराबर रात दिन रोगियोंकी देखभाल करते रहनेके कारण फिर उनके स्वास्थ्यमें कुछ अन्तर आगया। पहले उनके शिरमें पीड़ा उत्पन्न हुई; इस के बादही शरीरकी क्षीणता और खांसीने पीछा किया। उस समय किसीने इस बातपर विशेष ध्यान नहीं दिया, कि यह किसी भयङ्कर रोगका पूर्व लक्षण है। सभीने यह कहा कि केवल हवापानी बदलनेसे फिर आप भली चंगी होजायँगी। अतएव कभी अपने पतिके साथ और कभी अपनी संगिनी सहेलियोंके साथ आनन्दीबाईने बोष्टन, प्रविडेन्स हर्टफोर्ड, डिलावर्को, सिनसिनिटी, कालाइल

आदि अमेरिकाके अनेक स्वास्थ्यकर स्थानोंमें दो दो एक एक महीने तक वास किया। किन्तु इससे उनको कोई लाभ दिखाई नहीं दिया। हां, सिनसिनिटीमें नियागरा नदी के जलप्रपात (Water-fall) को, और कार्लाइल नगरमें 'इण्डियन स्कूल' को, जो दक्षिणीय अमेरिकामें आनेवाले हिन्दुओंके लिये एक प्रतिष्ठित विद्यालय है, देखकर, उन्होंने विशेष आनन्द अवश्य प्राप्त किया।

इसी समय कोल्हापुर-नरेशने अपनी राजधानीमें एक अस्पताल स्थापित किया था। इस अस्पतालमें काम करनेके लिये आनन्दीबाई बुलायी गयीं। बहुत दिनोंतक विदेशमें रहनेके कारण उनकी भी स्वदेशमें जाकर अपने आत्मीय स्वजनोंसे मिलनेकी इच्छा प्रबल हो रही थी; किन्तु गोपालरावने यह बात स्वीकार नहीं की। उनकी रूस और इंग्लैण्ड आदि देशोंमें जाकर भारतीय रीति नीतिकी श्रेष्ठता प्रकट करनेवाली वक्तृता सुनानेकी अभिलाषा थी। लाचार, आनन्दीबाईने अकेलेही देशको लौटना स्थिर किया। अन्तमें आनन्दीका स्वास्थ्य, उनकी अवस्था और उनकी स्वदेश जानेके लिये व्यग्रता देखकर गोपालरावको अपना विचार तोड़ना पड़ा। इसी समयमें आनन्दीबाईने अपने श्वशुरको एक पत्र लिखा था; जिसमें उन्होंने उनसे प्रर्थाना की थी, कि आप मेरी सासको मेरे पास रहनेके लिये कोल्हापुरमें भेज दें। उस समय आनन्दीबाई अपनी बूढ़ी सासकी सेवा टहल करके उसको आराम पहुंचानेके लिये बहुत व्याकुल होरही थीं।

अमेरिका छोड़नेसे पहले, डाक्टरोंकी रायसे, कुछ दिनोंतक आनन्दीबाईको पहाड़ी देशमें रखा गया था; किन्तु उससे भी उनके स्वास्थ्यमें कुछ उन्नति नहीं हुई; बल्कि वहां वे और भी बीमार होगयीं। धीरे धीरे ज्वरने उनपर आक्रमण किया। ऐसीही अवस्थामें, लोगोंके बहुत मना करनेपर भी, एक दुःखिनीके यहां बच्चा जनानेके लिये वे चली गयीं। वहां बराबर दश घण्टेतक परिश्रम करने और लौटते समय मार्गमें वृष्टिके जलसे भींग जानेके कारण उनकी पीड़ा और भी बढ़ गयी। परोपकारके लिये उदार होकर उस दुःखिनी रमणीका प्राण बचानेके लिये तो वे उसके घर गयीं, परन्तु उनकी यही पर-दुःख-कातरता अन्त में उनके प्राणकी लेनेवाली हुई!

जब उनकी पीड़ा बढ़ने लगी, तो कुछ दिनोंके लिये उन्होंने फिलाडेलफिया-कालेजमें जाकर निवास किया; परन्तु जब वहां भी उनका रोग दूर नहीं हुआ, तो वहां-वालोंने उनको अपने देशको लौट जानेकी सलाह दी। इसके बाद आनन्दीबाईने आपही कुछ औषध बनाकर उसका सेवा किया। यद्यपि उस औषधिसे उस समय वे कुछ अच्छी हो गयीं; किन्तु अधिक दिनोंतक भलीचंगी न रह सकीं। उनकी खांसी बढ़ गयी और क्षयी रोगने भी उनके शरीरमें प्रवेश किया। यह दशा देख, गोपालराव और उनके हितैषी लोग बहुत चिन्तित हुए। उस समय आनन्दीबाईको पूर्ण रूपसे निश्चय होगया, कि जबतक मैं अपने देशमें जाकर वैद्यकी चिकित्सा न करूंगी, तबतक

मेरी बीमारी दूर नहीं होगी।

कोल्हापुरसे निमन्त्रण आनेके बाद आनन्दीबाई श्रीमती कारपेण्टर आदिसे मिलकर अमेरिकासे बिदा होनेकी तय्यारियाँ करने लगीं। इसी समय उनकी अध्यापिका मिसेज बडलेने उनके साथ जो बर्ताव किया, वह उल्लेखयोग्य है। आनन्दीबाई ने उनके बहुत समझाने बुझाने पर भी जब खृष्टान बनना स्वीकार नहीं किया, तब मिसेज़ बडलेने उनको बहुत दुःख दिया। मिसेज साहबा की कृपा (!) से उनको कई दिनों तक उपवास भी करना पड़ा। अब जब उन्होंने यह सुना, कि आनन्दीबाई कोल्हापुर-राज्यमें बुलायी गयी हैं, तो वे ऐसा उद्योग करने लगीं, कि जिससे उनको वह जगह न मिले! पर, विशेष क्या कहें, अन्तमें उनकी एक न लगी। परन्तु इससे पहले भी अनेक बार आनन्दीबाई मिशनरियोंके द्वारा दुःखित की गयी थीं;—इन्हीं कारणोंसे उन्हें निश्चय होगया था, कि पादरी लोग क्रूर, विश्वास-घातक और बेईमान होते हैं। भारतवर्षमें आकर जब उनकी बीमारी कुछ बढ़ गयी, तो एकदिन वे स्वप्नमें क्या देखती हैं, कि मानो कोल्हापुरके स्त्री-चिकित्सालयमें पादरिनोंसे उनका झगड़ा हो रहा है, और इस झगड़ेकी बात महाराजके कानोंतक भी पहुंची है!

१८८६ ई० की ९वीं अक्तूबरको आनन्दीबाई और गोपालराव श्रीमती कारपेण्टरके गांवको छोड़कर आंखोंमें आँसू भरे बन्दरकी ओर रवाना हुए। बिदा होते समय आनन्दीबाईने अपनी सहेलियोंसे कहा था, कि अवसर

मिलनेके कुछ दिनोंके लिये मैं अमेरिकामें फिर आऊंगी। अमेरिकाके अनेक सज्जनोंने उनके साथ ऐसा अच्छा बर्ताव किया था, कि उनको उस देशके साथ सचमुच बहुत स्नेह होगया था। किन्तु जिस तरह उनके और कई मनोरथ पूरे नहीं हुए, उसी तरह उनकी फिर अमेरिकामें आनेकी कामना भी अपूर्ण रह गयी।

आनन्दीबाईको जहाजपर चढ़ाकर, श्रीमती कारपेण्टर उदास भावसे घर लौटीं। आनन्दीबाई भी उनके लिये बहुत दुःखित हुई। इसके सिवा, जहाजपर चढ़ते समय उनकी दाहिनी आँख फड़कने लगी! यह अशकुन देख उनका चित्त और भी व्याकुल हुआ। इसके ऊपर जहाज का इधर उधर हिलना और डगमगाना! ये सब ऐसी बातें थीं, जिनसे आनन्दीबाईका कष्ट और भी बढ़ गया। ज्वर, खांसी, अरुची, दुर्बलता आदि अनेक रोगोंने उनको पीड़ित करना आरम्भ किया। १७ वीं अक्तूबरकी रातको उनकी अवस्था ऐसी बिगड़ गयी, कि गोपालरावने उनके जीनेकी आशा भी त्याग दी! किन्तु भगवान्की कृपासे दूसरे दिन वे कुछ अच्छी हो गयीं।

लन्दनमें आकर उनको जहाज बदलना पड़ा। अतएव उस समय उस जहाजसे उतरकर दम्पती दूसरे जहाजके लिये टिकट खरीदकर उसपर सवार होने चले; किन्तु जहाजके अध्यक्षने 'नेटिव' या 'काला आदमी' कहकर उनको सवार नहीं होने दिया! गोपलरावने टिकट देकर रुपया वापस कर लिया और फिर वे दूसरे जहाजकी, जो

नेटिवों (!) को भी लेजाता हो, खोज करने लगे। इस चढ़ाई उतराई और जहाजकी खोजमें चलने फिरनेसे आनन्दीबाईकी बीमारी और भी बढ़ गयी। किन्तु लाचार हो बेचारीने सब दुःख सहन किये।

इसके बाद शीघ्रही दम्पतीको दूसरा जहाज मिल गया। रुपयेकी कमीके कारण और आनन्दीबाईको आराम पहुंचानेके खयालसे—गोपालरावने उनके लिये प्रथम श्रेणीका टिकट खरीदा, और अपनेको उनका नौकर बता कर अपने लिये तीसरे दर्जेका टिकट लिया। लन्दन छोड़ने के बाद कई दिन तक आनन्दीबाई कुछ अच्छी थीं। उस समय उनको ऐसी आशा हुई, कि मैं अपने देशमें पहुंचते पहुंचते अच्छी हो जाऊगी। किन्तु उनकी पीड़ाने और भी उन्नति की!

इसी बीमारीकी अवस्थामें १९ वीं नवम्बरको श्रीमती आनन्दीबाई जोशी बम्बईमें पहुंच गयीं। गोपालरावके भाईबन्द उनके आनेकी खबर पाकर पहलेहीसे समुद्र किनारे खड़े थे। जिस समय स्वदेशीय कपड़े लत्ते पहने और स्वदेशीय रंगढंग बनाये आनन्दीबाई जहाजसे उतरीं, उस समय उन लोगोंने फूलोंकी वृष्टि कर उनका अभिनन्दन किया। आनन्दीबाईके आनेके समाचारके फैलतेही स्थान स्थानके लोगोंने सभा समितियां करके और अभिनन्दन-पत्र भेजके उनको सम्मानित करना आरम्भ किया। अनेक लोगोंने तारद्वारा आनन्द प्रकाश किया। समाचारपत्रोंमें उनकी प्रशंसामें प्रलम्ब लेख निकलने लगे।

किन्तु जिनके लिये लोग इतनी धूमधाम और आडम्बर करते थे, जिनकी प्रशंसा और यशके गान लोग गाते थे, जिनके लिये इतना आनन्द प्रकाश करते थे, उनका रोग दिनोंदिन बढ़ताही जाता था। एक एक करके बम्बईके अनेक डाक्टरोंने उनकी दवा की; कई बार हवा पानी भी बदलवाया गया; किन्तु किसी तरह आनन्दीबाई अच्छी नहीं हुई। अन्तमें वे पूनामें गयीं। वहांके अच्छे जलवायु और आत्मीय स्वजनोंके साथ रहनेके कारण पहले कई दिनोंके लिये वे कुछ चंगी होगयीं, किन्तु उनकी जैसी सेवा गोपालरावने की, वैसी किसी दूसरेसे नहीं बनी। उस समय गोपालरावने उनके लिये ऐसा परिश्रम किया था, जैसा कोई मां भी अपने बच्चेकी सेवाके लिये न करेगी! वे एक क्षणके लिये भी आनन्दीबाईके पाससे दूर नहीं होते थे। आनन्दी की चारपाईके पास बैठे बैठे उनको कई कई रातें जागतेही बीत जाती थीं। किन्तु हा! दुर्भाग्य-वश उनके इस परिश्रमकी कोई सार्थकता नहीं हुई! आनन्दीबाई दिनपर दिन कमजोर होतीही गयीं! अनेक तरहकी वैद्यकी और डाक्टरी दवाएँ की गयीं—अनेक तरह के बीमारी दूर करनेके उपाय किये गये; पर किसीसे फायदा नहीं हुआ!

आनन्दीबाईकी बीमारीकी खबर सुनकर प्रतिदिन बहुतसे लोग उनको देखनेके लिये आते थे। समाचारपत्रों में उनकी शारीरिक अवस्थाकी बात प्रायः नित्यही प्रकाशित होती थी। माननीय श्रीयुत बालगंगाधर तिलक

महोदयने उस समय आनन्दीबाईकी चिकित्साके लिये अपने पाससे बहुत रुपये खर्च किये थे।

बहुत दिनोंतक विदेशमें रहनेके कारण आनन्दीबाई स्वदेशकी तरह तरहकी खानेकी चीजोंके लिये तरस गयी थीं। स्वदेशमें आनेके बाद डाक्टरोंके मना करनेसे कुछ दिनोंतक उन्होंने खाने पीनेमें विचार किया; किन्तु पीछे जब उनको अपने जीवनकी आशा न रही, तब उन्होंने हर तरहकी मीठी, तीतो, कडुवी चीजें खाना आरम्भ किया! एक दिन किसी वैद्यने उनको गर्म दवा पिलाकर कहा, कि आज इनको मांगनेपर भी पीनेके लिये पानी न दिया जाय। आनन्दीबाई उस दवाकी गर्मीसे छटपटाने और पानीके लिये चिल्लाने लगीं। गोपालराव इससे पहलेही निराश हो चुके थे; तिसपर उसदिनकी दशादेखकर उनको उनकी मृत्युके निकट होनेका और भी निश्चय था; अतएव उन्होंने उनको थोड़ासा जल पिला दिया। जल पीतेही रोगिनीको कुछ आराम मालूम हुआ। धीरे धीरे उसकी सब व्याकुलता दूर हो गयी और शरीरकी गर्मी कम होने लगी!

दूसरे दिन (१८८७ ई०—२६ वीं फरवरी) की शाम तक यही अवस्था रही। सन्ध्या-समय गोपालरावने आनन्दीबाईको कुछ दूध पिलाया। अबतक जोकुछ उनको खिलाया पिलाया जाता था, वह कैके रास्ते निकल जाता था; किन्तु स्वामीके हाथका दूध पच गया। इसके बाद दवा पीकर आनन्दीबाई सोगयीं। गोपालराव पिछले तीन दिनों

से एक दिनके लिये भी उनके पाससे दूर नहीं हुए थे, या एकदिनके लिये भी वे सोये नहीं थे। किन्तु उसदिन न जाने क्यों उनको नींद आगयी! आनन्दीबाईकी मां भी वहीं चारपाईके पास बैठी थीं। रातके दश बजनेके समय उनकी आंखें भी कुछ कुछ झपकने लगीं; इतनेमें एक कै करके आनन्दीबाईने 'मां मां' चिल्लाया। उनकी मां तुरंत, उनके पास चली गयीं। उनके कानोंमें केवल यह आवाज कि "मुझसे जोकुछ बना, मैंने किया" सुनाई दी! यही आनन्दीबाईका अन्तिम वाक्य था! मांने देखा, कि प्यारी लड़की का जीवनप्रदीप सदाके लिये बुझ गया! जिसने इतने दिनोंतक स्त्री-शिक्षाकी विजयपताका उड़ाकर विलायतवालोंको भी चकित चमकित कर दिया था; जिसने स्वदेशसेवाके लिये बहुत कुछ करनेका दृढ़ संकल्प किया था; उसको निष्ठुर कालने कुसमयमेंही उटा लिया! भारतवासियोंके आशारूपी वृक्षकी जड़ कट गयी! देशका एक सच्चा शुभचिन्तक चला गया!

परिशिष्ट ।

सन् १८८३ ई० की ३री सितम्बरको श्रीमती कारपेण्टरकी एक चित्र-पुस्तकमें आनन्दीबाईने--

"तुम क्या चाहती हो"

शीर्षक प्रश्नोंके उत्तरमें जो बातें लिखीं थीं, वे नीचे उद्धृतकी जाती हैं। इन्हें देखनेसे मालूम होगा, कि आनन्दीबाईका हृदय कैसे सुन्दर गुणोंसे अलंकृत था,—

१—रंगोंमें ?—सफेद ।

२—फूलोंमें ?—गुलाबका फूल ।

३—वृक्षोंमें ?—आमका वृक्ष ।

४—दर्शनीय वस्तुओंमें ?—पर्वत ।

५—समयमें ?—सूर्य्योदय और सूर्य्यास्त ।

६—ऋतुओंमें ?—बसन्त ।

७—गन्धोंमें ?—मालती फूलकी सुगन्धि ।

८—रत्नोंमें ?—हीरा ।

९—सौन्दर्य्यमें ?—सदाचार और सुन्दर आकृति ।

१०—नामोंमें ?—रमा, तारा, एनी, गोपाल, विष्णु और कृष्ण ।

११—चित्रकारोंमें ?—सभी चित्रकार ।

१२—बाजा बजानेवालोंमें ?—वीणा बजानेवाले ।

१३—भास्कर-शिल्पमें ?—ताजमहल ।

१४—कवियोंमें ?—पोप, मनु और कालिदास ।

१५—कवयित्रियोंमें ?—*मुक्ताबाई और जनाबाई ।

* महाराष्ट्र साहित्यकी भक्तिगाथा रचयित्रियोंमें इन दोनों स्त्रियोंका स्थान

१६—गद्यलेखकोंमें ? गोल्डस्मिथ, मेकाले, एडिसन और चिपलूणकर शास्त्री* ।

१७—ऐतिहासिक पुरुषोंमें ?—सिंहहृदय रिचर्ड ।

१८—अवकाशके समय पढ़ने योग्य ग्रन्थोंमें ?—श्रीमद्भगवद्गीता ।

१९—मृत्युके समय भी किस ग्रन्थका विच्छेद असह्य जान पड़ता है ?—धर्म्मशास्त्र और जगत्के इतिहासका ।

२०—जन्मग्रहण करने योग्य कौन काल है ?—वर्त्तमान युग ।

२१—रहने योग्य स्थान कौन है ?—सम्प्रति रोशल; फिर स्वर्ग ।

२२—वह कौन समय है जो आनन्दमें बीतता है ?—पुस्तक पढ़ानेका समय ।

२३—कौनसी जीविका अच्छी है ?—सामान्यभावसे जीवनयात्रा निर्वाह करनेके लिये जिसका करना अत्यन्त आवश्यक हो ।

२४—प्रिय गुण क्या है ?—सत्यका अनुसरण ।

२५—तुम्हारी समझमें सबसे घृणित दोष क्या है ?

बहुत ऊंचा है । मुक्ता ब्राह्मणकी लड़की थी और जना शूद्रकी । ये दोनोंही १३ वीं शताब्दीमे आविर्भूत हुई थीं ।

* स्वर्गीय विष्णुशास्त्री चिपलूणाकर महाराष्ट्र साहित्यके पक्षमे वैसेही थे, जैसे हिन्दीके पक्षमें भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र, पण्डित अम्बिकादत्त व्यास और पण्डित प्रतापनारायण मिश्र । उक्त शास्त्रीजीका जीवनचरित हम लिख रहे है, जो चित्रसहित शीघ्र प्रकाशित होगा । पण्डित गंगाप्रसाद अग्निहोत्रीजी ने इनके कुछ प्रबन्धोंका हिन्दीअनुवाद किया है, जो काशीकी ना० प्र० सभाके द्वारा प्रकाशित हुआ है । (गं० प्र० गुप्त)

मिथ्याचार और नास्तिकता।

२६—किसके समान होनेकी तुम्हारी इच्छा होती है?—किसीके समान नहीं।

२७—तुम्हारी रायमें सच्चा सुख क्या है?—भगवन्निष्ठा।

२८—और दुःख?—अपना हठ।

२९—तुम्हें कौनसे कामसे चिढ़ है?—दासत्व और पराधीनतासे।

३०—तुम्हारे सुखकी अन्तिम सीमा कब होती है? जब किसी किये हुए कार्य्यका फल मिलता है।

३१—तुममें कौनसा विशेष गुण है?—अभी तक तो कोई दिखाई नहीं दिया।

३२—तुम्हारे स्वामीका प्रधान गुण क्या है?—परोपकार-परायणता।

३३—उत्तम मानसिक वृत्ति?—प्रीति।

३४—सुननेमें अत्यन्तमें मधुर शब्द कौन हैं?—प्रीति, क्षमा, सत्य और आशा।

३५—और अत्यन्त कड़वे?—नष्ट और परित्यक्त।

३६—तुम्हारे जीवनका प्रधान उद्देश्य क्या है?—परोपकार करनेकी योग्यता प्राप्त करना।

* * * * * *

इनमें कई प्रश्नोंके उत्तर ऐसे हैं, जिनपर ध्यान देना और जिनके अनुसार बर्तना सभीको उचित है॥

॥ इति॥

